पढ़ें और सीखें योजना

चमत्कार परमाणु ऊर्जा के

उमेश चन्द्र मिश्र

विभागीय सहयोग

राम दुलार शुक्ल

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

प्रथम संस्करण
सितम्बर 1988 · भाद्र 1910

प्रथम पुनर्मुद्रण
सितम्बर 1999 भाद्रपद 1921

PD 5T GR

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय

एन सी ई आर टी कैम्पस	108, 100 फीट रोड, होस्डेकेरे	नवजीवन ट्रस्ट भवन	सी डब्ल्यू सी कैम्पस
श्री अरविंद मार्ग	हेली एक्सटेंशन, बनाशकरी III इस्टेज	डाकघर नवजीवन	32, बी.टी. रोड, सुखचर
नई दिल्ली 110016	**बैंगलूर 560085**	**अहमदाबाद 380014**	**24 परगना 743179**

रु. 26.00

प्रकाशन प्रभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा न्यू प्रिन्टइंडिया प्रा. लिमिटेड, 8/4B साहिबाबाद औद्योगिक क्षेत्र, साईट-4, गाजियाबाद (उ.प्र.) द्वारा मुद्रित।

प्राक्कथन

विद्यालय शिक्षा के सभी स्तरों के लिए अच्छे शिक्षाक्रम, पाठ्यक्रमों और पाठ्यपुस्तकों के निर्माण की दिशा में हमारी परिषद् पिछले चौबीस वर्षों से कार्य कर रही है। हमारे कार्य का प्रभाव भारत के सभी राज्यों और संघ शासित प्रदेशों में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से पड़ा है और इस पर परिषद् के कार्यकर्ता संतोष का अनुभव कर सकते हैं।

किन्तु हमने देखा है कि अच्छे पाठ्यक्रम और अच्छी पाठ्यपुस्तकों के बावजूद हमारे विद्यार्थियों की रुचि स्वतः पढ़ने की ओर अधिक नहीं बढ़ती। इसका एक मुख्य कारण अवश्य ही हमारी दूषित परीक्षा-प्रणाली है जिसमें पाठ्यपुस्तकों में दिए गए ज्ञान की ही परीक्षा ली जाती है। इस कारण बहुत ही कम विद्यालयों में कोर्स के बाहर की पुस्तकों को पढ़ने के लिए प्रोत्साहन दिया जाता है। लेकिन अतिरिक्त पठन में बच्चों की रुचि न होने का एक बड़ा कारण यह भी है कि विभिन्न आयुवर्ग के बालकों के लिए कम मूल्य की अच्छी पुस्तकें पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध भी नहीं हैं। यद्यपि पिछले कुछ वर्षों में इस कमी को पूरा करने के लिए कुछ काम प्रारंभ हुआ है पर वह बहुत ही नाकाफी है।

इस दृष्टि से परिषद् ने बच्चों की पुस्तकों के रूप में लेखन की दिशा में महत्वाकांक्षी योजना प्रारंभ की है। इसके अंतर्गत, ''पढ़ें और सीखें'' शीर्षक से एक पुस्तकमाला तैयार करने का विचार है जिसमें विभिन्न आयुवर्ग के बच्चों के लिए सरल भाषा और रोचक शैली में अनेक विषयों पर बड़ी संख्या में पुस्तकें तैयार की जाएंगी। हम आशा

करते हैं कि 1989 के अंत तक हिन्दी में हम निम्नलिखित विषयों पर 50 पुस्तकें प्रकाशित कर सकेंगे।

क. शिशुओं के लिए पुस्तकें
ख. कथा साहित्य
ग. जीवनियाँ
घ. देश-विदेश परिचय
ड. सांस्कृतिक विषय
च. वैज्ञानिक विषय
छ. सामाजिक विज्ञान के विषय

इन पुस्तकों के निर्माण में हम प्रसिद्ध लेखकों, अनुभवी अध्यापकों और योग्य कलाकारों का सहयोग ले रहे हैं। प्रत्येक पुस्तक के प्रारूप पर भाषा, शैली, और विषय-विवेचन की दृष्टि से सामूहिक विचार करके उसे अंतिम रूप दिया जाता है।

परिषद् इस माला की पुस्तकों को लागत-मूल्य पर ही प्रकाशित कर रही है ताकि ये देश के हर कोने में पहुंच सकें। भविष्य में इन पुस्तकों को अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद कराने की भी योजना है।

हम आशा करते हैं कि शिक्षाक्रम, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों के क्षेत्र में किए गए कार्य की भाँति ही परिषद् की इस योजना का भी व्यापक स्वागत होगा।

प्रस्तुत पुस्तक 'चमत्कार परमाणु ऊर्जा के' के लेखन के लिए डा. उमेश चन्द्र मिश्र ने हमारा निमंत्रण स्वीकार किया जिसके लिए हम उनके अत्यंत आभारी हैं। जिन-जिन विद्वानों, अध्यापकों और कलाकारों से इस पुस्तक को अंतिम रूप देने में हमें सहयोग मिला है उनके प्रति मैं कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

हिंदी में ''पढ़ें और सीखें'' पुस्तकमाला की यह योजना प्रो. अनिल विद्यालंकार के मार्ग-दर्शन में चल रही है। उनके सहयोगियों में श्रीमती संयुक्ता लुदरा, डा. रामजन्म शर्मा, डा. सुरेश पांडेय, डा. हीरालाल बाछोतिया और डा. अनिरुद्ध राय सक्रिय सहयोग दे रहे हैं। विज्ञान की पुस्तकों के लेखन का मार्गदर्शन राजस्थान विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति डा. रामचरण मेहरोत्रा कर रहे हैं और इन पुस्तकों के लेखन में हमारे विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग के डा. रामदुलार शुक्ल सहयोग दे रहे हैं। मैं डा. रामचरण मेहरोत्रा को और अपने सभी सहयोगियों को हार्दिक धन्यवाद और बधाई देता हूँ।

इस माला की पुस्तकों पर बच्चों, अध्यापकों और बच्चों के माता-पिता की प्रतिक्रिया का हम स्वागत करेंगे ताकि इन पुस्तकों को और भी उपयोगी बनाने में हमें सहयोग मिल सके।

पी. एल. मल्होत्रा
निदेशक
नई दिल्ली **राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्**

दो शब्द

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.) का "पढ़ें और सीखें" योजना के अंतर्गत यह एक छोटा सा प्रयास है। जब परिषद् के प्रगतिशील निदेशक डा. पी. एल. मल्होत्रा ने मुझे इस दिशा में "विज्ञान" के विषयों का कार्यभार संभालने के लिए आमंत्रित किया तो अपने वैज्ञानिक मित्रों की अतिव्यस्तता के कारण यह उत्तरदायित्व स्वीकार करने में मुझे संकोच था।

इस दिशा में मेरा प्रयास रहा है कि विज्ञान के विभिन्न विषयों के जाने-माने विद्वानों को इस सराहनीय कार्य के लिए आकर्षित कर सकूँ क्योंकि खोज और अनुसंधान की आनंदपूर्ण अनुभूतियों वाले वैज्ञानिक ही अपने "आनंद" की एक झलक बच्चों तक पहुंचा सकते हैं। मैं उनका हृदय से आभारी हूँ कि उन्होंने अंकुरित होने वाली पीढ़ी के लिए अपने बहुमूल्य समय में से कुछ क्षण निकालने का प्रयास किया। कहते तो हम सब हैं कि 'बालक' राष्ट्र की सब से बहुमूल्य और महत्वपूर्ण निधि हैं परंतु मेरे लिए यह किंचित आश्चर्य और अधिक संतोष का अनुभव रहा है कि हमारे इतने लब्धप्रतिष्ठ और अत्यंत व्यस्त वैज्ञानिक 'बच्चों' के लिए ऐसा परिश्रम करने के लिए सहर्ष मान गए हैं। मैं सभी वैज्ञानिक मित्रों के लिए हृदय से आभारी हूँ।

इन पुस्तकों की तैयारी में हमारा मुख्य ध्येय रहा है कि विषय ऐसी शैली में प्रस्तुत किया जाए कि बच्चे इसकी ओर आकर्षित हों, साथ ही भाषा इतनी सरल हो कि बच्चों को इनके अध्ययन द्वारा विज्ञान के गूढ़तम रहस्यों को समझने में कोई कठिनाई न हो। इन पुस्तकों के पढ़ने से उनमें अधिक पढ़ने की रुचि पैदा हो, उनके नैसर्गिक कौतूहल में वृद्धि

हो जिससे ऐसे कौतूहल और उसके समाधान के लिए स्वप्रयत्न उनके जीवन का एक अंग बन जाए।

यह योजना एन.सी.ई.आर.टी. के वर्तमान निदेशक डा. पी. एल. मल्होत्रा की प्रेरणा से प्रारंभ हुई है। मैं उन्हें इसके लिए बधाई और धन्यवाद देता हूँ।

डा. उमेश चंद्र मिश्र ने इस पुस्तक के लिखने के लिए मेरा अनुरोध स्वीकार किया जिसके लिए मैं हृदय से आभारी हूँ। परिषद् के विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग के प्रो. रामदुलार शुक्ल विज्ञान की पुस्तकों के लेखन से संबंधित योजना के संयोजक हैं और बहुत परिश्रम और कुशलता से अपना कार्य कर रहे हैं। प्रो. अनिल विद्यालंकार "पढ़ें और सीखें" संपूर्ण योजना के संचालक हैं। मैं इन दोनों को हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

आशा है कि ऐसी पुस्तकों से हमारी नई पीढ़ी के बाल्यकाल ही में वैज्ञानिक मानसिकता का शुभारंभ हो सकेगा और विज्ञान के नवीनतम ज्ञान के साथ ही साथ उन्हें अपने देश की प्रगतियों एवं वैज्ञानिकों के कार्य की झलक मिल सकेगी जिससे उनमें अपने राष्ट्र के प्रति गौरव की भावना का भी सृजन होगा।

रामचरण मेहरोत्रा
अध्यक्ष
"पढ़ें और सीखें योजना"
(विज्ञान)

इस पुस्तक के विषय में

मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.) ने युवा विद्यार्थियों के लिए विज्ञान के आधुनिक विषयों पर सहायक पुस्तकें प्रकाशित करने की बहुत उपयोगी योजना आरंभ की है और इस श्रंखला की कई पुस्तकें बहुत वरिष्ठ वैज्ञानिकों द्वारा लिखी जा रही हैं। यह उनकी युवा पीढ़ी में रुचि और उनके प्रति दायित्व की भावना का द्योतक है और विशेषरूप से सराहनीय है। इस संदर्भ में इस पुस्तिका में "चमत्कार परमाणु ऊर्जा के" विषय का समावेश अत्यन्त उपयुक्त है। विज्ञान और तकनीकी के आधुनिक क्षेत्रों के बारे में युवा छात्रों को जानकारी प्रदान करना सरकार की नई शिक्षा नीति का एक प्रमुख उद्देश्य है। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए आवश्यक हो जाता है कि छात्रों को उपयुक्त मूल्य में सरल और रोचक भाषा में लिखी पुस्तकें उपलब्ध कराई जाएं। इनमें यह ध्यान रखना आवश्यक है कि वैज्ञानिक तथ्यों को सही रूप में प्रस्तुत किया जाए। मुझे यह जानकर विशेष प्रसन्नता है कि यह पुस्तकें पहले हिन्दी में प्रकाशित की जाएंगी और फिर अन्य भाषाओं में। इस प्रकार यह योजना परोक्ष रूप में राजभाषा के प्रसार में सहायक होगी और वैज्ञानिक विषयों पर हिन्दी में मूल लेखन को भी प्रोत्साहित करेगी।

भारतीय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के दूरद्रष्टा संस्थापकों ने आरंभ से ही इस नई तकनीकी के स्वदेशी विकास और कम से कम समय में आत्मनिर्भरता प्राप्ति के प्रयत्नों पर बल दिया था। यह नीति आज भी अपनाई जा रही है। इसका प्रमाण हमें बहुत आरंभिक चरणों में ही इस केन्द्र में एशिया के प्रथम अनुसंधान रिएक्टर "अप्सरा" के रूप में

मिलता है जिसका निर्माण 1956 में पूरी तरह हमारे अपने साधनों द्वारा किया गया था। तब से हमने बहुत लम्बा रास्ता तय किया है और इसी परम्परा का सबसे हाल का उदाहरण 100 मेगावाट का अनुसंधान रिएक्टर "ध्रुव" है जिसने पिछले वर्ष कार्यारंभ किया। इसका डिजाइन और निर्माण भी पूर्णरूप से स्वदेशी है। आज भारत कदाचित् ऐसा एकमात्र विकासशील देश है जिसने संपूर्ण नाभिकीय ईंधन चक्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली है। इस अत्यन्त जटिल और आधुनिक विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र की जानकारी प्राप्त करने में हमें आरंभ में समय और आर्थिक रूप से कुछ कीमत चुकानी पड़ी थी परन्तु अब हमें इसके अच्छे परिणाम मिलने लगे हैं। इसी के फलस्वरूप हम देश के विभिन्न स्थानों पर परमाणु बिजलीघरों के निर्माण का महत्वाकांक्षी कार्यक्रम हाथ में लें सके हैं जिनसे सन् 2000 तक 10,000 मेगावाट बिजली उत्पादन होने की आशा है।

अभी तक प्राप्त पहल को बनाए रखने और जिन क्षेत्रों में विकसित देश हमसे आगे हैं उनमें दूरी कम करने के लिए हमें मूलभूत एवं व्यावहारिक अनुसंधान एवं विकास कार्यों को पूरी लगन से करते रहना होगा। आगामी वर्षों में हमें इस कार्य के लिए बड़ी संख्या में भलीभांति शिक्षित वैज्ञानिकों और तकनीकी व्यक्तियों की आवश्यकता होगी। इसके लिए आवश्यक है कि आज के युवा वर्ग को परमाणु ऊर्जा के बारे में अधिकाधिक जानकारी प्रदान की जाए ताकि इस विषय में उनकी रुचि उत्पन्न हो और वे जितना संभव हो सके और जानकारी प्राप्त करने का प्रयत्न कर सकें। अपेक्षा की जाती है कि इस पुस्तिका के माध्यम से भारत में परमाणु ऊर्जा के विकास की कहानी बहुत अधिक व्यक्तियों तक पहुँच सकेगी।

विज्ञान का अपेक्षाकृत नया क्षेत्र होने के कारण, हमारे स्कूलों के पाठ्यक्रमों में परमाणु ऊर्जा के बारे में पर्याप्त जानकारी नहीं प्रदान की गई है। इसलिए इसके विभिन्न उपयोगों को भलीभांति समझने और सरहाने के लिए आवश्यक है कि पुस्तक में नाभिकीय भौतिकी की कुछ मूलभूत जानकारी को दिया जाए। परन्तु इस भूमिका को आवश्यकता से अधिक नहीं बढ़ने देना है ताकि पुस्तिका पाठ्यपुस्तक का रूप न ले ले। मेरे विचार से लेखक इस संतुलन को बनाए रखने में सफल हुआ है। वह पिछले 25 से अधिक वर्षों से परमाणु ऊर्जा के विभिन्न कार्यक्रमों से जुड़ा रहा है और उसे वैज्ञानिक विषयों पर हिन्दी में लेखन का भी पर्याप्त अनुभव है। मुझे विश्वास है कि हमारे युवा छात्रों को यह पुस्तिका रुचिकर और सूचनाप्रद लगेगी। इस प्रकार की पुस्तिकाओं की सफलता, लेखकों को ऐसी ही पुस्तकें जूनियर कालेज और कालेज स्तर के छात्रों के लिए लिखने को प्रेरित करेगी जिनका अभी काफ़ी अभाव है।

मैं इस योजना और विशेष रूप से इस पुस्तिका की सफलता की कामना करता हूँ।

पी. के. अय्यंगार

निदेशक

बम्बई

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र

विषय सूची

लेखक परिचय

डा० उमेशचंद्र मिश्र (जन्म 21 अगस्त 1938) एम.एस-सी., पी.एच.डी.।

पिछले 31 वर्षों से पर्यावरण सम्बन्धी समस्याओं पर शोधकार्य और हिन्दी में वैज्ञानिक विषयों पर लेखन।

सम्प्रति—बम्बई के भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र में प्रदूषण मानीटरिंग के अध्यक्ष।

प्रस्तावना

परमाणु ऊर्जा का नाम आते ही हमें 1945 में द्वितीय विश्वयुद्ध के अंतिम दिनों में जापान के दो प्रमुख नगरों हिरोशिमा और नागासाकी पर गिराए गए परमाणु बमों का ध्यान आ जाता है जिनसे जानमाल की इतनी व्यापक क्षति हुई थी कि सारा विश्व डर गया था। परमाणु ऊर्जा का यह उपयोग इतना डरावना था कि इसने सर्वसाधारण में यह धारणा उत्पन्न कर दी कि यह ऊर्जा स्रोत अत्यन्त विध्वंसकारी है और इसका प्रमुख उपयोग मानव का संहार करना है और सम्भवत: भविष्य में भी यही हो। यह अत्यन्त दुर्भाग्य की बात है कि इतने शक्तिशाली और चमत्कारी स्रोत से हमारा पहला परिचय विध्वंसकारी उपयोग के माध्यम से हुआ (चित्र 1)। परन्तु इस अवांछित उपयोग ने हमें इस नए ऊर्जा स्रोत की शक्ति का आभास कराया और विश्वभर के वैज्ञानिकों का

चित्र 1. परमाणु बम विस्फोट से उत्पन्न बादल

ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित हुआ कि यदि यह स्रोत इतना शक्तिशाली है तो इसकी शक्ति का उपयोग मानव कल्याण और विकास के साधनों के लिए भी किया जा सकता है।

यह सच है कि परमाणु ऊर्जा के इस विध्वंसकारी उपयोग का और विकास करके कई विकसित देशों ने ऐसे अस्त्रों का विकास, निर्माण और भंडार स्थापित किया है जो आज विश्वभर में इतनी अधिक संख्या में उपलब्ध हैं। आज इतने शक्तिशाली बम उपलब्ध हैं जिनसे इस पृथ्वी पर मानवता का पूर्ण संहार एक बार नहीं बल्कि अनेक बार करना संभव है। उन्नत और शक्तिशाली देशों की सामरिक योजनाएं आज ऐसे नाजुक संतुलन में हैं जहां दुर्भाग्य से यदि कभी परमाणु युद्ध आरंभ हुआ तो इससे पूर्व कि उसे रोकने के उपाय सोचे भी जा सकें, कई सौ या कई हज़ार परमाणु और हाइड्रोजन बमों का विस्फोट इस धरती पर हो चुका होगा। यदि ऐसा हुआ तो उत्तरी गोलार्द्ध में तो शायद कुछ भी न बच सके। इस संदर्भ में अंतरिक्ष में प्रस्तावित "स्टार युद्ध" जैसी योजनाओं से इस नाज़ुक संतुलन के और बिगड़ने की संभावनाएं बढ़ गई हैं। इसमें दोषी न तो परमाणु ऊर्जा है और न तो वैज्ञानिक ही, जो निरंतर नई ज्ञानकारी प्राप्त करने में लगे हुए हैं।

आशा है कि विश्व स्तर पर परमाणु और हाइड्रोजन बमों के निर्माण और परीक्षणों पर रोक लगाने के प्रयत्न और उनके भंडारों को कम करने के प्रयास निकट भविष्य में सफल होंगे। इन प्रयासों को नाभिकीय निरस्त्रीकरण (Nuclear Disarmament) की संज्ञा दी गई है और इनके अंतर्गत बुद्धिजीवी, वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अनेकों देश उन शक्तिशाली देशों पर दबाव डालने का प्रयत्न कर रहे हैं जो निरंतर ऐसे घातक अस्त्रों का निर्माण और भंडार बनाने में लगे हुए हैं। उनसे कहा

जा रहा है कि वह इस दिशा में परिवर्तन कर जल्दी से जल्दी परमाणु अस्त्रों की संख्या में कमी करें और निश्चित समय में उन्हें पूरी तरह समाप्त कर दें। निरस्त्रीकरण से ही मनुष्य चैन की सांस ले सकेगा।

निरस्त्रीकरण के पक्ष में ठोस प्रमाण पिछले कुछ वर्षों में किए गए वैज्ञानिक अध्ययनों ने प्रस्तुत किए हैं। इन अध्ययनों में वैज्ञानिकों ने उपलब्ध वैज्ञानिक जानकारी के आधार पर उन विश्वव्यापी कुप्रभावों के आंकड़े प्रस्तुत किए हैं जो सीमित परमाणु युद्ध के होंगे। इनमें यह सिद्ध किया गया है कि यदि वर्तमान परमाणु और हाइड्रोजन बमों की संख्या के एक तिहाई या चौथाई बमों का भी विस्फोट हुआ तो न केवल वहां जहां ये बम गिराए जाएंगे बल्कि सारे उत्तरी गोलार्ध में अंधेरा छा जाएगा। तापमान 30 से 40 अंश तक गिरेगा और इससे अत्यधिक शीत का मौसम कई महीनों तक बना रहेगा। इससे जिन देशों में यह बम गिराए जाएंगे उनका सर्वनाश तो होगा ही, अन्य देश जो युद्ध क्षेत्र में नहीं भी होंगे उनका भी सर्वनाश होगा। इस प्रक्रिया को "नाभिकीय शरद" (Nuclear Winter) की संज्ञा दी गई है। इसके अंतर्गत यदि हम यह मानें कि परमाणु और हाइड्रोजन बमों के विस्फोटों का आदान-प्रदान यूरोप और अमरीका के देशों के बीच होगा तो भी भारतवर्ष के अधिकांश पेड़ पौधे, जीव-जन्तु और कृषि का ऐसा नाश होगा जो सैंकड़ों वर्षों तक फिर अपनी पुरानी अवस्था में न आ सकेगा। इन पर निर्भर मनुष्य का जीवन भी नष्ट होता चला जाएगा। इनके अतिरिक्त विस्फोटों से उत्पन्न विकिरणों का कुप्रभाव भी भोगना होगा। हमें आशा है कि यह तथ्य और आंकड़े निकट भविष्य में मानव जाति को इस भयावह स्थिति की संभावना से मुक्त कराने में सहायक होंगे।

सौभाग्य से भारत ने आरंभ से ही परमाणु ऊर्जा के शांतिमय और कल्याणकारी उपयोगों पर ही ज़ोर दिया है। इन्हीं के फलस्वरूप आज

परमाणु ऊर्जा के उपयोग से भारत परमाणु बिजलीघरों का निर्माण कर देश की बिजली की मांग को पूरा करने में सफल हो रहा है। परमाणु ऊर्जा कार्यक्रमों की ही देन रेडियोआइसोटोपों के भी अनेकानेक उपयोग रोगों के निदान और इलाज, कृषि, उद्योग आदि में किए जा रहे हैं तथा इनके सभी पहलुओं पर अनुसंधान और विकास कार्य तेज़ी से चल रहे हैं। अनेकों उपयोग देश को आर्थिक लाभ भी प्रदान कर रहे हैं। इनमें से कुछ प्रमुख उपयोगों की चर्चा हम इस पुस्तिका में करेंगे। इस चर्चा का आरंभ हम मनुष्य द्वारा ऊर्जा साधनों के विकास से करेंगे क्योंकि औद्योगिक विकास और मानव जीवन को सुखद एवं रोचक बनाने के लिए हमें अधिकाधिक ऊर्जा की आवश्यकता है और निरंतर बढ़ती जनसंख्या की बढ़ती आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए यह मांग कम जनसंख्या वाले देशों की अपेक्षा भारत में और तेज़ी से बढ़ती ही जाएगी। विकसित देशों की अपेक्षा हमारा ऊर्जा उत्पादन (प्रति व्यक्ति) इतना कम है कि इसे तेज़ी से बढ़ाए बिना हम प्रगति और विकास की कामना नहीं कर सकते हैं।

1

ऊर्जा साधनों का विकास

जब मनुष्य इस पृथ्वी पर आया तो सर्दी से बचने, खाना पकाने आदि में उसे कठिनाई हुई और उसने पत्थरों को रगड़कर चिन्गारी उत्पन्न की। सूखे पत्तों में चिन्गारी से आग जलाई और ताप ऊर्जा के उपयोग का क्रम आरंभ हुआ। सभ्यताओं के विकास का सीधा सम्बन्ध पेय जल, खाद्य पदार्थों की उपलब्धि और ऊर्जा साधनों के विकास से जुड़ गया। अधिकांश पुरानी सभ्यताएं नदियों के किनारों पर विकसित हुईं जहां यह साधन उपलब्ध थे। ऊर्जा साधनों के रूप में पहले लकड़ी और फिर कोयले का उपयोग बढ़ा। कई शताब्दियों तक यह क्रम चलता रहा और पिछली शताब्दी के अंत तक इसमें केवल खनिज तेल का उपयोग ऊर्जा साधन के रूप में और जुड़ा।

मनुष्य ने बहुत पहले ही अनुभव किया कि पृथ्वी पर जीवन के विकास के लिए संतुलित रूप में पाई जाने वाली अधिकांश पर्यावरणीय देन सूर्य के कारण ही संभव हो सकी हैं। सूर्य से मिलने वाली गर्मी और प्रकाश के रूप में उपलब्ध अपार ऊर्जा और सूर्य से पृथ्वी की उपयुक्त दूरी से ही यह सब संभव हुआ है। इसीलिए मनुष्य ने सूर्य की उपासना

जीवनदायक ऊर्जा स्रोत के रूप में की और भारत तथा विश्व के कई भागों में आज भी यह प्रथा प्रचलित है। आज भी मानव सूर्य का कोई वैकल्पिक ऊर्जा स्रोत विकसित नहीं कर पाया है। यह पता बहुत हाल में ही लगा कि सूर्य से मिलने वाली अपार ऊर्जा वास्तव में परमाणु ऊर्जा का ही उदाहरण है, जिसकी चर्चा हम इस पुस्तिका में करेंगे। ऊर्जा स्रोत के रूप में लकड़ी और कोयले का व्यापक उपयोग मनुष्य ने कई शताब्दियों तक किया। इन्हीं के उपयोग से विकसित ताप चालित इंजनों का विकास विशेष रूप से महत्वपूर्ण था क्योंकि इनसे यातायात में तेज़ी आई और दूरियाँ कम हो गईं। आविष्कारों के इस क्रम का सबसे महत्वपूर्ण चरण था बिजली का आविष्कार। इसने हमारे विकास-क्रम में तीव्रता और क्रांति उत्पन्न कर दी। आज तो बिजली के बिना उद्योग और सुखद् जीवन की कल्पना भी कठिन प्रतीत होती है। बिजली ने हमें ऐसा व्यापक ऊर्जा स्रोत प्रदान किया जिसे अन्य प्रकार की ऊर्जाओं, जैसे ताप, प्रकाश, ध्वनि, चुंबकत्व और यांत्रिक ऊर्जाओं में आसानी से परिवर्तित किया जा सकता है। इसे सरलता से एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचाया जा सकता है। अधिकांश उद्योग इसी से चलते हैं। इन सभी आकर्षक पहलुओं के कारण बिजली, विकास का मानदण्ड बन गई है। आज किसी देश के विकास की गति को उस देश के प्रति व्यक्ति द्वारा बिजली के उपयोग से आंका जा सकता है।

बिजली के आविष्कार के उपरान्त अधिकांश अनुसंधान और विकास प्रयत्न, ऊर्जा चालित यंत्रों की दक्षता बढ़ाने पर केंद्रित होने लगे। ऊर्जा का अधिक से अधिक सक्षमता से उपयोग किया जाने लगा। बिजली उत्पादन के लिए पहले कोयला और बाद में तेल और प्राकृतिक गैस का उपयोग ईंधन के रूप में किया जाने लगा। इन तीनों ईंधनों के उपयोग पर आधारित बिजलीघर मूलतः एक ही प्रक्रिया पर आधारित
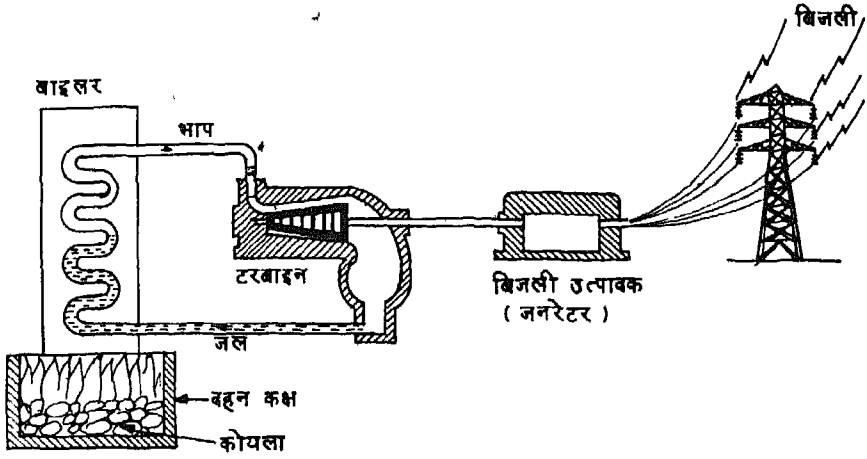
चित्र 2. बिजलीघर की मूल संरचना

होते हैं जिसे चित्र 2 में दिखाया गया है। इसमें दहनकक्ष में कोयला, तेल या गैस को जलाकर ताप उत्पन्न किया जाता है। इससे पानी को भाप में बदला जाता है। जिस भाग में यह प्रक्रिया होती है उसे वाष्पक या ब्वाइलर कहते हैं। इस भाप का उपयोग बिजली उत्पादक, जिसे जनरेटर कहते हैं, की धुरी को टरबाइन के माध्यम से घुमाने में किया जाता है। टरबाइन में धुरी पर अनेकों पंख लगे होते हैं जिन्हें वाष्प के दबाव के उपयोग से घुमाते हैं। टरबाइन की धुरी जनरेटर की धुरी से जुड़ी होती है अतः टरबाइन के घूमने से जनरेटर की धुरी भी घूमने लगती है। जनरेटर द्वारा उत्पन्न बिजली को बिजली के तारों द्वारा विभिन्न स्थानों तक पहुंचाया जाता है।

बिजली उत्पादन के लिए एक प्राकृतिक स्रोत का उपयो । भी अधिक व्यापक रूप से किया गया है, इसे जल विद्युत कहते हैं। इसके

लिए नदी के जल को ऊंचाई पर एक जलाशय में एकत्र किया जाता है। फिर इस जल को नियंत्रित रूप में ऊंचाई से छोड़ा जाता है। इस प्रकार ऊंचाई से गिर रहे जल का उपयोग जनरेटर की धुरी से जुड़े पंखों को घुमाने में किया जाता है। इस प्रकार जलविद्युत के उत्पादन की विधि अत्यन्त सरल है। चित्र 2 में दिखाई संरचना के पहले दो भाग इसमें नहीं होते केवल विशेष संरचना के पंखों वाले टरबाइन और जनरेटर ही इसमें प्रयोग में आते हैं। सिद्धांत रूप में सरल होते हुए भी जलविद्युत को प्राप्त करना हर जगह संभव नहीं है। इनके निर्माण में बहुत अधिक धन और समय लगता है। इसके लिए एक पहाड़ी क्षेत्र और बड़े जल स्रोत की आवश्यकता है, ताकि ऊंचे स्थान पर निर्मित जलाशय से पर्याप्त जल मिल सके। इस स्रोत के अनेकों लाभ हैं। निर्माण के बाद इनको ईंधन की आवश्यकता नहीं होती, कोई प्रदूषक उत्पन्न नहीं होता और बिजली के साथ सिंचाई सुविधा भी उपलब्ध हो जाती है। भारत में इस प्रकार के बड़े बिजलीघर भाखड़ा, हीराकुंड आदि स्थानों पर बनाए गए हैं। परन्तु जैसा बताया गया है, इस प्रक्रिया का सीमित उपयोग ही संभव है।

ऊर्जा स्रोतों के विकास का यह क्रम इस शताब्दी के आरंभिक कुछ दशकों तक चलता रहा। वैज्ञानिक सिद्धांतों में कोई क्रांति या बिलकुल नया मोड़ देने वाले कोई आविष्कार सामने नहीं आए। इसका प्रमुख कारण वैज्ञानिकों की विचारधारा में एकरसता और एकमत से यह मान लेने की धारणा थी कि पदार्थ एवं ऊर्जा संरक्षण के सिद्धांत पर आधारित हैं और इनमें आपस में आदान-प्रदान या एक का दूसरे में परिवर्तन संभव नहीं है। यह धारणा बन गई है कि ऊर्जा को एक रूप से दूसरे में परिवर्तित तो किया जा सकता है जैसे पदार्थ को एक रूप से दूसरे में। परन्तु इनमें सदैव कुल मात्रा का संरक्षण रहता है और एक को दूसरे में परिवर्तित करना संभव नहीं है।

इस विचार को दूर करने वाला और आधुनिक परमाणु युग की नींव डालने वाला अत्यन्त क्रांतिकारी आविष्कार इस शताब्दी के प्रथम दशाक में एलबर्ट आइंस्टाइन नामक वैज्ञानिक ने सापेक्षता सिद्धांत के रूप में किया। आधुनिक परमाणु युग का आरंभ तो वास्तव में सन् 1895 में रान्जन द्वारा एक्स-रे के आविष्कार और इसके तुरंत बाद सन् 1896 में रेडियोधर्मिता की खोज से हुआ। इसमें एक और महत्वपूर्ण योगदान सन् 1898 में मैडम क्यूरी द्वारा रेडियोसक्रिय रेडियम तत्व के प्रथक्करण ने दिया। परन्तु सन् 1905 में आइंस्टाइन के द्रव्यमान और ऊर्जा की समतुल्यता के सिद्धांत की खोज ने परमाणु ऊर्जा के विकास को गति प्रदान की। परमाणु ऊर्जा के विकास के कुछ मीलस्तम्भों को सारणी 1 में दर्शाया गया है। हम इनकी संक्षिप्त चर्चा आइंस्टाइन के सिद्धांत से ही आरंभ करेंगे।

आइंस्टाइन का समतुल्यता सिद्धांत हमें पहली बार यह बताने में सफल हुआ कि पदार्थ को ऊर्जा में और ऊर्जा को पदार्थ में बदलना सिद्धांत रूप में संभव है। इतना ही नहीं बल्कि उन्होंने यह भी साबित किया कि वास्तव में इन दोनों के बीच निश्चित संबंध या समतुल्यता हैं। इसे उन्होंने एक समीकरण के रूप में बताया। यह समीकरण है:

$$E = MC^2$$

यहां E (Energy) ऊर्जा, M (Mass) द्रव्यमान और C (velocity of light) प्रकाश की गति हैं, अर्थात्

$$\text{ऊर्जा} = \text{द्रव्यमान} \times (\text{प्रकाश की गति})^2$$

जैसाकि आप जानते हैं प्रकाश की गति 300,000 किलोमीटर प्रति सेकंड होती है। इस अत्यन्त सरल दिखने वाले समीकरण ने हमें एक साथ कई बातें बताईं और यह भी आभास कराया कि वैज्ञानिक तब तक

इसे अपने प्रयोगों के आधार पर क्यों न खोज पाये थे। यदि हम समीकरण की दाहिनी ओर को देखें तो उसमें प्रकाश की गति का वर्ग पाते हैं। यह अत्यन्त बड़ी संख्या है (जिसका मान स्थिर है)। यह साबित करती है कि ऊर्जा की बहुत बड़ी मात्रा द्रव्यमान की अत्यन्त सूक्ष्म मात्रा के समतुल्य है। इसका अर्थ हुआ कि यदि हमने किसी प्रक्रिया में ऊर्जा को द्रव्यमान में बदल भी लिया था तो द्रव्यमान की मात्रा इतनी कम होगी कि हमारे पास उसे नापने के कोई साधन न थे। इसी प्रकार यदि किसी पदार्थ से हमें ऊर्जा प्राप्त भी हुई, तो उस समय तक उपलब्ध विभिन्न रासायनिक प्रक्रियाओं में जो ऊर्जा निकलती थी उसके समतुल्य द्रव्यमान में कमी इतनी कम है कि इसका पता लगाने के कोई साधन उपलब्ध न थे। इस आविष्कार के बाद हुई परमाणु ऊर्जा के विकास से सम्बन्धित खोजों ने आगे चलकर हमें भौतिक प्रक्रियायें प्रदान कीं जिनमें इस समीकरण का प्रायोगिक प्रमाण मिल सका। साथ ही साथ इस समीकरण ने हमें इन खोजों के लिए प्रोत्साहित भी किया। इसने यह भी आश्वासन दिया कि द्रव्य को ऊर्जा में परिवर्तित करना सम्भव है। उदाहरण के रूप में आज हम जानते हैं कि दहन की रासायनिक प्रक्रियाओं द्वारा जितनी ताप ऊर्जा हमें 1000,000 घन मीटर गैस से मिलती है उतनी ही ऊर्जा 800 घन मीटर कोयला या 470 घन मीटर पेट्रोल उत्पन्न करता है। इनकी तुलना में यदि हम परमाणु विखंडन की भौतिक प्रक्रिया का उपयोग यूरेनियम नामक तत्व से ऊर्जा प्राप्त करने में करें तो मात्र 0.000014 घन मीटर यूरेनियम उतनी ही ऊर्जा देता है जितना पहले बताए रासायनिक स्रोतों में से कोई एक। इस प्रकार आइन्स्टाइन के आविष्कार का चमत्कारी प्रायोगिक रूप आज हमें परमाणु ऊर्जा के रूप में मिलता है जिसकी चर्चा हम इस पुस्तक में विस्तार से करेंगे।

सारणी-I

परमाणु ऊर्जा विकास के कुछ मीलस्तम्भ

वर्ष	आविष्कार	वैज्ञानिक/देश
1895	एक्स-रे	डब्लू. सी. रान्जन
1896	रेडियो धर्मिता	एच. ए. बेकारेल
1898	रेडियम प्रथक्करण	पियरी और मारी क्यूरी
1905	द्रव्यमान और ऊर्जा की समतुल्यता	ए. आइंस्टाइन
1909	अल्फा कणों की संरचना	रदरफोर्ड और रोथड्स
1911	परमाणु नाभिक की परिकल्पना	रदरफोर्ड
1932	न्यूट्रान	चाडविक
1932	नाभिक की संरचना	हैसरबर्ग
1934	कृत्रिम रेडियोधर्मिता	जोलियो और आइरीन क्यूरी
1939	नाभिकीय विखंडन	हान और स्ट्रासमान
1942	परमाणु रिएक्टर	ए. फर्मी
1945	परमाणु बम विस्फोट	संयुक्त राज्य अमरीका

सारणी-1 में बताए आइन्स्टाइन के बाद के परमाणु ऊर्जा के विकास में सहायक सबसे महत्वपूर्ण आविष्कार सन् 1911 में रदरफोर्ड नामक वैज्ञानिक ने किया। यह आविष्कार परमाणु नाभिक की परिकल्पना के रूप में ज्ञात है। सन् 1932 में चाडविक द्वारा न्यूट्रान नामक कणिकीय पदार्थ की खोज, सन् 1932 में ही हैसनबर्ग द्वारा दी गई नाभिक की संरचना, सन् 1934 में जोलियोड क्यूरी और आइरीन क्यूरी द्वारा कृत्रिम रेडियोधर्मिता की खोज और सन् 1939 में हान और स्ट्रासमान नामक वैज्ञानिकों द्वारा नाभिकीय विखंडन की खोज इस आविष्कार की श्रृंखला में आते हैं। इन सभी खोजों ने परमाणु ऊर्जा के विकास रूपी भवन की ईंटों का कार्य किया। पहली इमारत एनरिको फर्मी नामक वैज्ञानिक ने सन् 1942 में अमरीका के शिकागो नगर में परमाणु रिएक्टर का सफल संचालन करके बनाई। विश्वभर के आम व्यक्तियों को परमाणु ऊर्जा की अपार शक्ति का आभास सन् 1945 में जापान के दो प्रमुख नगरों हिरोशिमा और नागासाकी पर हुए परमाणु बम विस्फोटों के रूप में मिला। इसके पश्चात् परमाणु ऊर्जा के सामरिक और शांतिमय उपयोगों का विकास समांतर रूप से विश्व के विभिन्न देशों में हुआ और आज यह ऊर्जा के अत्यन्त व्यापक और उपयोगी स्रोत के रूप में हमारे सामने उभर कर आया है। फ्रांस और इंग्लैंड जैसे कुछ देश तो मात्र बिजली उत्पादन के लिए 30 से 50 प्रतिशत परमाणु ऊर्जा का उपयोग कर रहे हैं।

परमाणु ऊर्जा क्या है? इसे समझने का प्रयत्न हम परमाणु की कुछ मूलभूत जानकारी से आरंभ करेंगे।

परमाणु संरचना

हम अपने आसपास जो भी चीजें देखते हैं वे लगभग सौ विभिन्न

प्रकार के तत्वों के मिलने से बनी हैं, जैसे हाइड्रोजन, कार्बन, नाइट्रोजन, यूरेनियम आदि। सामान्य ताप पर इनमें से कुछ गैस के रूप में होते हैं जैसे हाइड्रोजन, आक्सीजन, नाइट्रोजन। कुछ द्रव अवस्था में जैसे, पारा। शेष ठोस अवस्था में होते हैं, जैसे कार्बन, एल्यूमिनियम, यूरेनियम। इन तत्वों के विभिन्न अन्य तत्वों से विशिष्ट मात्रा में मिलने से हमें विभिन्न वस्तुएं प्राप्त होती हैं, जैसे हाइड्रोजन और आक्सीजन के मिलने से पानी; हाइड्रोजन और क्लोरीन के मिलने से हाइड्रोक्लोरिक अम्ल आदि।

प्रत्येक तत्व की सूक्ष्मतम इकाई को हम परमाणु कहते हैं। परमाणुओं का आकार इतना छोटा होता है कि कई हज़ार परमाणुओं को एक साथ रखने पर भी हम उन्हें देख नहीं सकते। उदाहरण के लिए यदि हम कार्बन के 50,000,000,000,000,000 परमाणुओं को एक साथ रखकर तौलें तो उनका भार लगभग 1 माइक्रोग्राम (1 ग्राम भार का 1,000,000 वाँ भाग) होगा जिसे हम देख न पाएंगे। प्रत्येक तत्व के परमाणुओं की संरचना भिन्न होती है और अन्य सभी तत्वों के परमाणुओं से अलग। इनकी संरचना ही उस तत्व के विशिष्ट गुणों को निर्धारित करती है।

यद्यपि परमाणु किसी तत्व की सूक्ष्मतम इकाई है परन्तु इसकी संरचना काफ़ी जटिल होती है। इसे हम कुछ चरणों में समझेंगे। परमाणु के दो प्रमुख भाग होते हैं। इनके केन्द्र में स्थित बहुत अधिक घनत्व वाला अत्यन्त सूक्ष्म भाग होता है जिसे नाभिक या न्यूक्लियस कहते हैं। नाभिक के चारों ओर निरंतर परिक्रमा कर रहे अत्यधिक सूक्ष्म

कणिकीय पदार्थ को इलेक्ट्रान कहते हैं (चित्र 3)। "इलेक्ट्रान" नाभिक के चारों ओर निर्दिष्ट कक्षाओं में उसी प्रकार परिक्रमा करते रहते हैं जैसे हमारे सौर मण्डल में सूर्य के चारों ओर निर्दिष्ट कक्षाओं में मंगल, शुक्र, पृथ्वी आदि ग्रह करते रहते हैं। जैसे ग्रहों की कक्षाओं के आयतन की तुलना में सूर्य का आयतन बहुत कम है वैसे ही इलेक्ट्रान की कक्षाओं के आयतन की तुलना में नाभिक का आयतन भी अत्यन्त सूक्ष्म होता है। इन दोनों में एक समानता यह भी है कि जैसे पृथ्वी की तुलना में सूर्य का भार अत्यधिक है उसी प्रकार इलेक्ट्रानों के भार की तुलना में नाभिक का। परमाणु का अधिकांश भाग (लगभग पूरा ही) नाभिक का ही भाग होता है। दोनों उदाहरणों में प्रमुख असमानता यह है कि विभिन्न ग्रहों के भार भिन्न हैं परन्तु परिक्रमा कर रहे सभी इलेक्ट्रानों का भार समान होता है। इलेक्ट्रानों की संख्या, उनका विभिन्न कक्षाओं में वितरण आदि तत्व के रासायनिक गुणों का निर्धारण करते हैं। प्रत्येक तत्व के परमाणुओं में इलेक्ट्रानों की संख्या भिन्न होती है जैसे हाइड्रोजन के परमाणुओं में केवल एक इलेक्ट्रान नाभिक के चारों ओर घूमता रहता है जबकि यूरेनियम तत्व के परमाणुओं में प्रत्येक नाभिक के चारों ओर 92 इलेक्ट्रान विभिन्न कक्षाओं में निरंतर घूमते रहते हैं। प्रत्येक इलेक्ट्रान पर एक ऋण आवेश या चार्ज होता है अतः किसी तत्व विशेष के परमाणुओं में जितने इलेक्ट्रान होते हैं उतने ही ऋण आवेश उसके नाभिक के चारों ओर पाए जाते हैं।
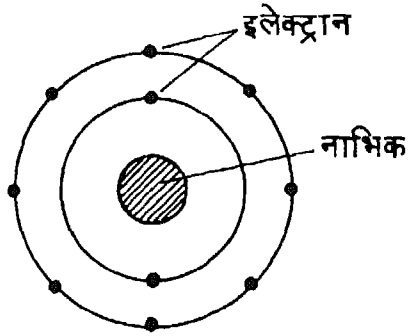
चित्र 3. परमाणु की मूल संरचना

अब आइए नाभिक के अन्दर झांक कर देखें। नाभिक की संरचना भी काफ़ी जटिल होती है परन्तु परमाणु ऊर्जा के उपयोगों को समझने के लिए कुछ मूल बातें जान लेना पर्याप्त होगा। नाभिक में दो प्रकार के कणिकीय पदार्थ पाए जाते हैं जिन्हें प्रोटान और न्यूट्रान कहते हैं। दोनों का भार लगभग बराबर होता है (न्यूट्रान का कुछ अधिक) और प्रत्येक का भार इलेक्ट्रान के भार या द्रव्यमान की अपेक्षा लगभग 1840 गुना अधिक होता है। न्यूट्रान आवेश या चार्ज रहित होता है परन्तु प्रोटान पर एक (घन) आवेश या चार्ज होता है। अतः किसी परमाणु के नाभिक में जितने प्रोटान होते हैं उसके नाभिक पर उतने ही धनावेश होते हैं और उतने ही इलेक्ट्रान नाभिक के चारों ओर परिक्रमा करते रहते हैं। प्रत्येक इलेक्ट्रान पर एक ऋण आवेश होने और परमाणु में प्रोटानों और इलेक्ट्रानों की संख्या समान होने के कारण जितने धन आवेश नाभिक पर होते हैं उतने ही ऋण आवेश उसकी परिक्रमा करते हैं और परमाणु
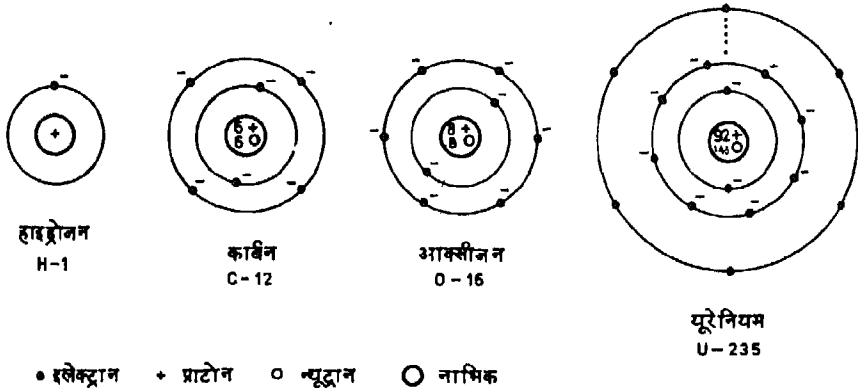
चित्र 4. हाइड्रोजन, कार्बन, आक्सीजन और यूरेनियम के परमाणु

विद्युत आवेश की दृष्टि से उदासीन होता है। किसी तत्व विशेष के परमाणुओं के नाभिकों में प्रोटानों की संख्या सदैव वही होती है और अन्य सभी तत्वों से भिन्न। इस संख्या को परमाणु क्रमांक या अटामिक नम्बर कहते हैं और यह संख्या उस तत्व का परिचय पत्र होती है। उदाहरण के तौर पर हाइड्रोजन के सभी परमाणुओं के नाभिकों में सदैव 1 प्रोटान होता है, कार्बन में 6, ऑक्सीजन में 8 और यूरेनियम में 92 (चित्र 4)। प्रोटानों की संख्या बदलने से तत्व बदल जाता है और ऐसा कृत्रिम रूप से करना अब संभव है। सामान्य रूप से जितने प्रोटान नाभिक में होंगे उतने ही इलेक्ट्रान नाभिक के बाहर।

न्यूट्रान उपरोक्त क्रम का पालन नहीं करते और इनकी संख्या किसी तत्व विशेष के विभिन्न परमाणुओं के नाभिकों में भिन्न हो सकती है। किसी परमाणु के नाभिक में प्रोटान और न्यूट्रान की कुल संख्या को उस परमाणु का भार क्रमांक या मास नंबर कहते हैं। यह परमाणु के भार को बताता है क्योंकि इलेक्ट्रानों का भार इसकी तुलना में नगण्य होता है। इस प्रकार किसी तत्व विशेष का परमाणु क्रमांक एक ही होता है परन्तु भार क्रमांक उसी तत्व के विभिन्न प्रकार के परमाणुओं में भिन्न हो सकता है। विभिन्न भार क्रमांक (परन्तु एक ही परमाणु क्रमांक) वाले परमाणुओं से बने विभिन्न पदार्थों को हम आइसोटोप या समस्थानिक कहते हैं।

किसी तत्व के परमाणुओं में न्यूट्रानों की संख्या बढ़ाने से बने भारी आइसोटोप प्रायः अस्थिर होते हैं और विभिन्न प्रकार के विकिरण या कणिकीय पदार्थों का उत्सर्जन करते हैं। इन अस्थाई आइसोटोपों को रेडियोआइसोटोप कहते हैं। इनके अनेकों उपयोग परमाणु ऊर्जा के संदर्भ में किए जा रहे हैं। इनके विषय में विस्तार से चर्चा आगे चलकर इनके उपयोगों के संदर्भ में करेंगे। केवल हाइड्रोजन ऐसा तत्व है जिसके

परमाणु के नाभिक में एक भी न्यूट्रान नहीं होता परन्तु इसके भी दो अन्य आइसोटोप ड्यूटेरियम और ट्रीटियम पाये जाते हैं। इन तीनों को **चित्र 5**
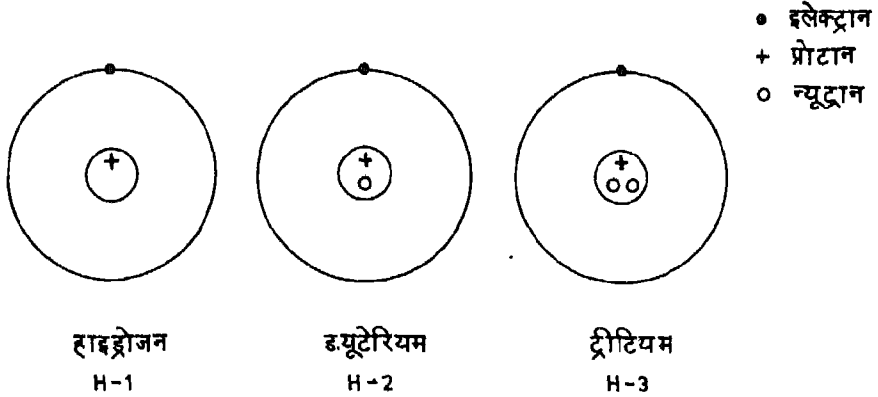
चित्र 5. हाइड्रोजन के आइसोटोप

में दिखाया गया है। इन तीनों के परमाणुओं के नाभिकों में एक प्रोटान होता है और एक ही इलेक्ट्रान परिक्रमा करता है। अन्तर यही है कि हाइड्रोजन के नाभिक में शून्य न्यूट्रान, ड्यूटेरियम में एक न्यूट्रान और ट्रीटियम में दो न्यूट्रान होते हैं। हाइड्रोजन और ड्यूटेरियम स्थाई आइसोटोप हैं जबकि ट्रीटियम रेडियो आइसोटोप (अस्थाई आइसोटोप) है। जिस प्रकार हाइड्रोजन और आक्सीजन के मिलने से पानी बनता है उसी प्रकार ड्यूटेरियम और आक्सीजन के मिलने से भारी पानी। भारी पानी का परमाणु ऊर्जा-उत्पादन में काफ़ी उपयोग होता है। हाइड्रोजन और ड्यूटेरियम प्राकृतिक रूप में मिलते हैं (दोनों स्थाई हैं)। केवल हाइड्रोजन के आइसोटोपों को भिन्न नाम भी दिए गए हैं अन्यथा किसी तत्व के विभिन्न आइसोटोपों को उसके चिन्ह के आगे विभिन्न भार

क्रमांक लिखकर दर्शाते हैं जैसाकि चित्र 6 में यूरेनियम के कुछ आइसोटोपों के लिए दिखाया गया है। इसी आधार पर हम हाइड्रोजन,
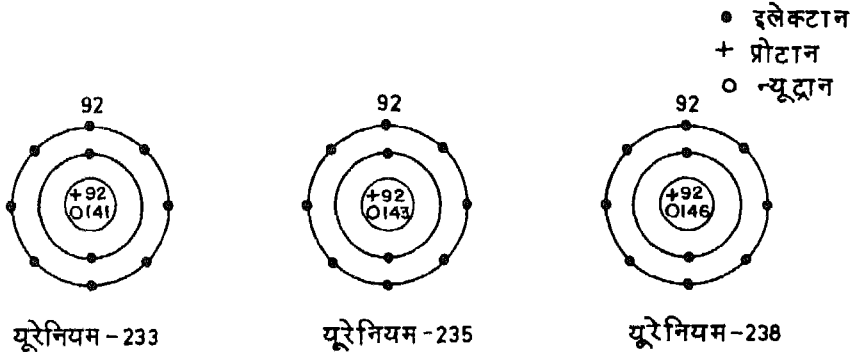
प्राकृतिक यूरेनियम में 11.3% यूरेनियम-238 और 0.7% यूरेनियम-235 होता है। यूरेनियम-233 को थोरियम-232 से बनाया जाता है। यूरेनियम-233 और यूरेनियम-235 ईंधन के रूप में काम आते हैं।

चित्र 6. यूरेनियम के महत्वपूर्ण रेडियोआइसोटोप

ड्यूटेरियम और ट्रीटियम को भी क्रमशः H-1, H-2 और H-3 से सम्बोधित कर सकते हैं। इसी प्रकार थोरियम और प्लूटोनियम के कुछ आइसोटोपों को चित्र 7 में दिखाया गया है जिनकी चर्चा हम परमाणु ऊर्जा के संदर्भ में आगे करेंगे।

परमाणु संरचना की जानकारी के संदर्भ में इसके आकार और भार की सूक्ष्मता का भी आभास कर लें। परमाणु अत्यन्त छोटे आकार का होता है इसका व्यास एक सेन्टीमीटर का लगभग
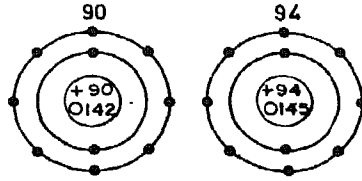
चित्र 7. थोरियम और प्लूटोनियम रेडियोआइसोटोप

1,000,000,000,000 वाँ भाग होता है और इसके नाभिक का व्यास इसका 100-1000 गुना और भी कम होता है। इससे संबंधित कुछ और आंकड़े तथा हमारी आगे की चर्चा में उपयोगी कुछ आंकड़े सारणी 2 में दिए गए हैं। अब हम परमाणु ऊर्जा के विभिन्न प्रकारों की कुछ चर्चा करेंगे।

□□□

2

परमाणु ऊर्जा

परमाणु ऊर्जा के अधिकांश उपयोग निम्नलिखित चार विभिन्न प्रकार की प्रक्रियाओं और उनसे उत्पन्न कुछ चमत्कारी प्रभावों पर आधारित हैं। यह हैं :

1. इलेक्ट्रानों से संबद्ध प्रक्रियाओं द्वारा उत्पन्न एक्स-रे के उपयोग;
2. रेडियोआइसोटोपों के गुणों और उनसे निकलने वाले विकिरण और ताप पर आधारित उपयोग;
3. परमाणु विखंडन के उपयोग; और
4. परमाणु संलयन के उपयोग।

इनमें से इलेक्ट्रानों से संबद्ध प्रक्रियाओं द्वारा उत्पन्न एक्स-रे के उपयोग की विस्तार में चर्चा इसी श्रृंखला की अन्य पुस्तकों में की जा रही है। अतः हम फिलहाल इस पर चर्चा नहीं करेंगे। रेडियोआइसोटोपो के गुणों से संबंधित चर्चा इस पुस्तक में आगे चलकर की गई है। अतः परमाणु विखंडन के उपयोग और परमाणु संलयन के उपयोग पर कुछ विस्तार से चर्चा यहां करेंगे। इस संदर्भ में यह जान लेना उपयोगी होगा कि प्रक्रिया 1 नाभिक के बाहर घूमते इलेक्ट्रानों पर आधारित है परन्तु शेष तीनों नाभिक की प्रक्रियाओं पर आधारित हैं, इसीलिए इन तीनों को

सारणी 2

परमाणु ऊर्जा से संबंधित कुछ आंकड़े

1. इलेक्ट्रान का द्रव्यमान	9.106×10^{-28} ग्राम
2. प्रोटान का द्रव्यमान	1.673×10^{-24} ग्राम
3. न्यूट्रान का द्रव्यमान	1.675×10^{-24} ग्राम
4. हाइड्रोजन के नाभिक का अर्धव्यास	1.5×10^{-18} सें.मी.
5. यूरेनियम के नाभिक का अर्धव्यास	लगभग 10^{-12} सें.मी.
6. प्रति विखंडन ऊर्जा	लगभग 200 एम.ई.वी.
7. 1 एम.ई.वी.	1.6×10^{-6} अर्ग
8. एक वाट ऊर्जा उत्पादन के लिए विखंडन दर	3.1×10^{10} विखंडन/सेकंड
9. अवोगेड्रो संख्या	6.02×10^{23} अणु/मोल
10. 1 मोल	ग्राम में अणुभार
11. नाभिक का घनत्व	लगभग 10^{14} ग्राम/घन सें.मी.
12. जल का घनत्व	1 ग्राम/घन सें.मी.

नाभिकीय ऊर्जा स्रोत कहना अधिक उपयुक्त होगा यद्यपि परमाणु ऊर्जा शब्द अधिक प्रचलित है और ग़लत इसलिए नहीं है क्योंकि नाभिक परमाणु का ही भाग है। अतः इन तीनों प्रक्रियाओं के संदर्भ में नाभिकीय ऊर्जा या न्यूक्लियर एनर्जी और परमाणु ऊर्जा या एटामिक एनर्जी पर्यायवाची शब्दों के रूप में प्रायः प्रयुक्त होते हैं। हम परमाणु ऊर्जा शब्द को व्यापक होने के कारण इस पुस्तक में अपनाएंगे।

अवर्णित प्रक्रियाओं की चर्चा के पूर्व कुछ मूलभूत जानकारी आवश्यक है। इसके लिए हम एक बार फिर आइन्स्टाईन के सिद्धांत से चर्चा आरंभ करेंगे। भौतिक प्रक्रियाओं के संदर्भ में हम परमाणुओं के बीच होने वाली प्रक्रियाओं को लेंगे (चित्र 8)। हम निम्न प्रक्रिया लें:

परमाणु विखंडन

परमाणु संलयन्
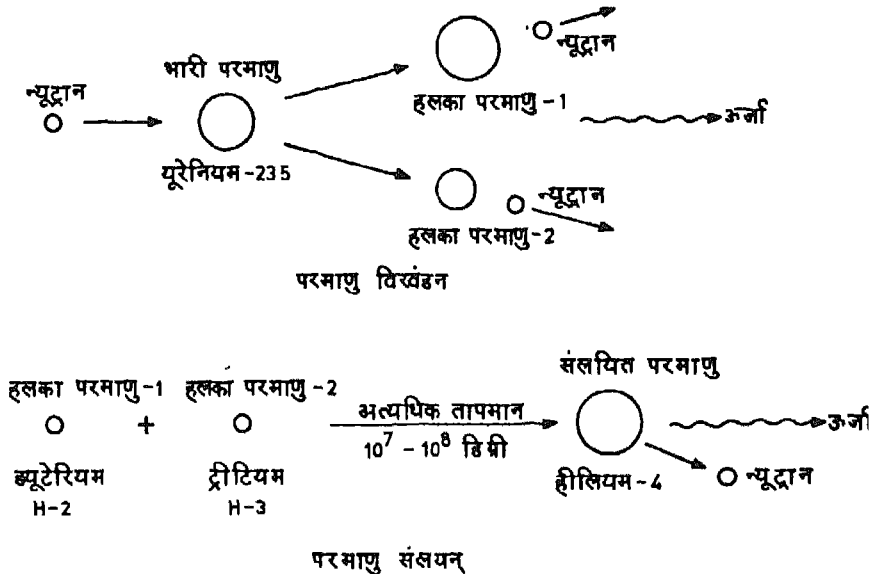
चित्र 8. विखंडन और संलयन की मूल प्रक्रियाएं

(अ) + (ब) → (स) + (द)

इसमें बाईं ओर दो परमाणु या परमाणु में उपस्थित कणिकीय पदार्थ किसी प्रक्रिया द्वारा दाईं ओर उत्पन्न परमाणु या कणिकीय पदार्थों को जन्म देते हैं। आइन्सटाईन के सिद्धांत के अनुसार इस प्रक्रिया में हमें तभी ऊर्जा प्राप्त हो सकती है जब (अ) + (ब) का संयुक्त भार, (स) + (द) के संयुक्त भार से अधिक हो। तभी यह भार की हानि हमें ऊर्जा के रूप में प्राप्त हो सकती है। यदि प्रक्रिया में भार संतुलन इसके विपरीत हुआ तो प्रक्रिया तभी संभव हो सकेगी जब हम उसके अनुरूप अत्यधिक ऊर्जा बाईं ओर के कणिकों, नाभिकों या परमाणुओं को प्रदान करें और ऐसी प्रक्रिया से ऊर्जा प्राप्ति की आशा तो की ही नहीं जा सकती। इरा तथ्य को जान लेने के बाद वैज्ञानिकों ने परमाणुओं के नाभिकों को अस्थिरता प्रदान करने के प्रयत्न आरंभ किए क्योंकि नाभिकों को तोड़ने या जोड़ने से ही उपरोक्त स्थिति प्राप्त करना संभव है। इलेक्ट्रानों का भार इतना कम होता है कि उनसे अत्याधिक ऊर्जा प्राप्ति की विशेष आशा नहीं है। परन्तु नाभिक तक पहुंचना और उसमें अस्थिरता उत्पन्न करना इतना सरल न था। इसका कारण समझने के लिए हम एक उदाहरण का सहारा लेंगे जो वास्तविकता के अनुरूप न होते हुए भी हमें कठिनाइयां समझने में सहायक होगा।

परमाणु की संरचना इतनी सुरक्षित बनी है जैसी पुराने जमाने में राजा महाराजा अपनी सुरक्षा के लिए दुर्ग बनाते थे। इन दुर्गों के चारों ओर ऊंची दीवारें होती थीं और उनकी अपेक्षा एक छोटा सा प्रवेशद्वार होता था। दीवार के साथ लगा पानी से भरा नाला होता था ताकि शत्रु को तैर कर दीवार तक पहुंचना पड़े। परमाणु में भी नाभिक की सुरक्षा हेतु विभिन्न इलेक्ट्रान प्रहरी के रूप में रखवाली करते हैं और अस्त्रों के रूप में इन पर ऋण आवेश होता है। इसके विपरीत नाभिक पर धन

आवेश होता है जो एक और उन्नत प्रकार के अस्त्र का कार्य करता है। कई प्रकार के बल भी इसके निकट पहुंचने पर सामने आते हैं, फिर इसका आकार इतना छोटा होता है कि इसमें प्रवेश कर अस्थिरता उत्पन्न करने के लिए भेजे जाने वाले आतंकवादी को इससे भी सूक्ष्म आकार का होना होगा। इन सभी समस्याओं को कैसे हल किया गया यह परमाणु विखंडन और संलयन की वास्तविक प्रक्रियाओं के विवरण में ही प्राप्त होगा।

परमाणु विखंडन

परमाणु विखंडन का अर्थ है परमाणु को विभाजित करना। ऐसा करने के लिए यदि हम बहुत भारी तत्व लें और उस पर न्यूट्रान नामक कणिकीय पदार्थ की बौछार करें तो ऊपर वर्णित किले को तोड़ने जैसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है, क्योंकि भारी तत्वों के नाभिक पहले से ही कुछ अस्थिर (रेडियोएक्टिव) होते हैं। अतः यह उस राज्य जैसे होते हैं जो कमज़ोर हैं और जिनमें गड़बड़ी पैदा कर तोड़फोड़ की जा सकती है। न्यूट्रान अत्यन्त सूक्ष्म आकार का और आवेश रहित होने के कारण उस पर न तो इलेक्ट्रान के ऋण आवेश रूपी अस्त्र और न नाभिक के प्रोटानों का धन आवेश रूपी अस्त्र काम करता है। वह छोटे आकार के कारण नाभिक में आसानी से घुस सकते हैं। घुसने के बाद नाभिक में पहले से उपस्थित अनेकों न्यूट्रानों में घुलमिल जाते हैं और आसानी से बाहर नहीं भगाए जा सकते हैं, अतः अस्थिरता उत्पन्न करने में सक्षम होते हैं। फिर एक किले को तोड़ने के बाद न्यूट्रान अपने साथ कुछ और न्यूट्रानों को लेकर बाहर आते हैं और पास के ही दूसरे किलों को इसी प्रक्रिया द्वारा तोड़ने में लग जाते हैं। किसी किले को तोड़ने का प्रयत्न तभी किया जाता है जब वहां से कुछ धन आदि मिलने की आशा हो। इसी प्रकार विखंडन रूपी प्रक्रिया द्वारा उन्हीं नाभिकों को तोड़ने का प्रयत्न किया जाता है

जिनसे ऊर्जा रूपी धन मिलने की आशा हो। अब इस प्रक्रिया से हम परमाणु विखंडन की मिली जानकारी की समीक्षा करें।

1. यह प्रक्रिया उन्हीं परमाणुओं पर की जाती है जो विखंडनीय हों (जैसे यूरेनियम-235, प्लूटोनियम-239 और यूरेनियम-233) इन्हीं के नाभिकों में ऐसी गड़बड़ी होती है कि न्यूट्रान रूपी आतंकवादी इन्हें तोड़ सकता है। साथ ही इन्हीं में धन रूपी ऊर्जा प्रदान करने की क्षमता है।

2. एक किला तोड़ने के बाद न्यूट्रान रूपी आतंकवादी अपने साथ और न्यूट्रान लेकर बाहर आता है और दूसरे किले तोड़ सकता है और इस प्रकार श्रृंखलाबद्ध रूप में निरंतर विजय प्राप्त करता रहता है।

इस विवरण से स्पष्ट है कि न्यूट्रान की आतंकवादी के रूप में खोज, विखंडन रूपी सामरिक नीति की खोज, विखंडनीय पदार्थों के रूप में समृद्ध परन्तु कमज़ोर राज्यों की खोज अत्यन्त महत्वपूर्ण थी और इनके बिना परमाणु विखंडन रूपी युद्ध आरंभ करना संभव न था। आज इस प्रक्रिया का उपयोग परमाणु रिएक्टर, परमाणु बिजलीघर आदि के निर्माण में किया जा रहा है जिसकी विस्तार से चर्चा हम आगे चलकर करेंगे। इससे पूर्व दूसरी सामरिक नीति या परमाणु ऊर्जा प्राप्ति के तरीके पर इसी उदाहरण के माध्यम से कुछ जानकारी प्राप्त करें। इसे परमाणु संलयन प्रक्रिया कहते हैं।

परमाणु संलयन

इस प्रक्रिया में दो बहुत हल्के नाभिक एक दूसरे में विलीन होकर एक ऐसा नाभिक बनाते हैं जिसका भार दो विलीन होने वाले नाभिकों के संयुक्त भार से कम होता है और भार की यह हानि हमें (आइन्स्टाईन सिद्धांत के ही अनुसार) अत्यधिक ऊर्जा के रूप में प्राप्त होती है। इसका

उपयोग अभी हाइड्रोजन बमों के निर्माण में ही व्यापक रूप से हो सका है। प्रकृति में इसका उदाहरण सूर्य में निरंतर हो रहे परमाणु संलयन के रूप में हमें मिलता है। सूर्य से मिलने वाली अत्यधिक ताप और प्रकाश रूप में ऊर्जा इसी प्रक्रिया से उत्पन्न हो रही है। जिस सूर्य की उपासना हम जीवनदायक ऊर्जा स्रोत के रूप में करते हैं वह वास्तव में परमाणु ऊर्जा का ही उदाहरण है। वैज्ञानिक अभी इसका विकास नियंत्रित और निरंतर प्राप्त हो सकने वाले ऊर्जा स्रोत के रूप में नहीं कर पाए हैं। जिस दिन यह हो सका उस दिन विश्व की ऊर्जा समस्या सदैव के लिए हल हो जाएगी, क्योंकि इसके लिए आवश्यक ईंधन (हाइड्रोजन के आइसोटोप ड्यूटेरियम) के अपार भण्डार सागर जल के रूप में हमें उपलब्ध हैं। इस स्रोत के विकास में क्या कठिनाइयां हैं और देर क्यों लग रही है इसका आभास प्राप्त करने के लिए संलयन प्रक्रिया रूपी रणनीति की समस्याओं को हम फिर क़िले जैसे ही उदाहरण द्वारा समझाएंगे।

यह प्रक्रिया क़िले को तोड़ने के प्रयत्न के स्थान पर दो सम्पन्न व्यक्तियों को आपस में लड़वाने जैसी है जिन्होंने अपनी सुरक्षा के पूरे प्रबन्ध कर रखे हैं। हम दोनों को भिड़ा कर उनकी संपत्ति (ऊर्जा रूप में) प्राप्त करना चाहते हैं और इसी प्रकार लगभग समान संपन्नता वाले व्यक्तियों को निरंतर भिड़ाते रखना चाहते हैं। इस लड़ाई के फलस्वरूप दोनों व्यक्ति तो समाप्त हो जाते हैं, उनके प्रहरी रूप में जो अंगरक्षक बच जाता है उसकी हमें चिंता नहीं है। ऐसा करने की योजना कछ इस प्रकार है। पहले उन दोनों के द्वार रक्षकों को डरा धमका कर भगा देना फिर उन दोनों को एक दूसरे के प्रति उत्तेजित कर लड़ने पर मजबूर कर देना। लड़ाई में दोनों का संहार होने पर उनकी संपत्ति का उपयोग करना। स्पष्ट है कि जब हम उन्हें उत्तेजित करें तो वह मैदान छोड़कर भाग न जाएं अन्यथा हमारा उद्देश्य पूरा न होगा।

संलयन का नियंत्रित रूप में प्राप्त करना कुछ सरल कार्य नहीं है। इसका अनुमान आप संलयन प्रक्रिया को प्राप्त करने के तरीके को समझ कर लगा सकेंगे। इस कार्य के लिए हाइड्रोजन के आइसोटोपड्यूटेरियम) और ट्रीटियम के परमाणुओं का संलयन सबसे आकर्षक है क्योंकि इसके लिए सबसे कम तापमान एक करोड़ डिग्री (लगभग 10,000,000 डिग्री) प्रदान करना होगा। इस प्रक्रिया के लिए इन दोनों आइसोटोपों के परमाणुओं को ऊपर बताए तापमान तक गर्म करना होता है। इतने अधिक तापमान पर परमाणुओं के नाभिकों की परिक्रमा कर रहे इलेक्ट्रान भाग जाते हैं और केवल धन आवेश वाले नाभिक जिन्हें प्लाज़्मा कहते हैं, शेष रह जाते हैं। इन नाभिकों की ऊर्जा भी इतनी अधिक हो जाती है कि इस अत्यधिक गतिज ऊर्जा के कारण इनके आपस में संलयन की संभावना बढ़ जाती है। इस प्रकार इस अत्यधिक तापमान पर पहले तो इलेक्ट्रान रूपी अंगरक्षक भागे और दोनों नाभिकों के उत्तेजन से एक दूसरे से टकराने की संभावना बढ़ी। अब देखें कि समस्याएं क्या हैं? पहली तो इतना अत्यधिक तापमान प्राप्त करने की समस्या है। हाइड्रोजन बम में तो यह कार्य उसके अन्दर प्रथम चरण के परमाणु बम द्वारा किया जाता है, पर नियंत्रित रूप में करने के उपयुक्त साधनों का विकास करना है। फिर इस अत्यधिक तापमान पर प्लाज़्मा रूपी धन आवेश वाले नाभिकों को बांधे रखना होगा ताकि संलयन हो सके। कोई सामान्य धातु या पदार्थ तो इतने अधिक तापमान पर इन्हें बांधे रखने वाले डिब्बे का कार्य नहीं कर सकता है क्योंकि बहुत पहले ही उसका वाष्पीकरण हो चुका होगा। इन कार्यों के लिए आवश्यकता होगी आधुनिकतम तकनीकी साधनों की जिनकी लागत भी अत्यधिक होती है और यह कार्य अनेकों वैज्ञानिकों के गुटों द्वारा ही संपन्न हों सकते हैं। इन्हीं कारणों से इस क्षेत्र का अधिकांश अनुसंधान कार्य विकसित

और संपन्न देशों में हो रहा है। भारत में भी इसके अध्ययन के लिए इंदौर, मध्य प्रदेश में उन्नत तकनीकी केंद्र की स्थापना भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, बम्बई द्वारा की जा रही है। आशा है कि विश्व स्तर पर चल रहे वर्तमान प्रयत्नों के फलस्वरूप अगली शताब्दी के दूसरे या तीसरे दशक तक हम इस ऊर्जा स्रोत के उपयोग की आशा कर सकते हैं। इसके वर्तमान उपयोग उपलब्ध न होने के कारण हम परमाणु संलयन प्रक्रिया पर और चर्चा नहीं करेंगे और परमाणु विखंडन के संबंध में कुछ वैज्ञानिक तथ्यों का अध्ययन कर उसके उपयोगों को समझने का प्रयत्न करेंगे। मूलभूत जानकारी के बाद हम वास्तविक उदाहरण के माध्यम से इसके संदर्भ में श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया को समझेंगे जिसके बिना हम विखंडन का उपयोग ऊर्जा उत्पादन के लिए नहीं कर पाते।

□□□

3

विखंडन प्रक्रिया

इस प्रक्रिया को समझने के लिए हम तीन विखंडनीय पदार्थों यूरेनियम-233, यूरेनियम-235 या प्लूटोनियम-239 में से सबसे अधिक उपयोग में आने वाले यूरेनियम-235 को लेंगे। प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले यूरेनियम में इसकी मात्रा केवल 0.7 प्रतिशत होती है, शेष भाग यूरेनियम-238 होता है। यही एक मात्र प्राकृतिक रूप में उपलब्ध विखंडनीय पदार्थ है। अन्य दोनों मानव निर्मित हैं और इनमें से यूरेनियम-233 का प्रयोग व्यावहारिक रूप में नहीं किया गया है।

यदि यूरेनियम-235 पर न्यूट्रान नामक कणिकीय पदार्थों की बौछार की जाए तो निम्न प्रक्रिया संभव है:

यूरेनियम-235 + न्यूट्रान → यूरेनियम-236*
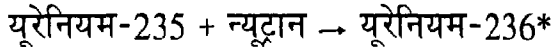
न्यूट्रान के अवशोषण से उत्पन्न यूरेनियम-236* अत्यन्त उत्तेजित और अस्थाई अवस्था में होता है। उत्तेजित अवस्था को (*) चिन्ह से दर्शाते हैं। यह शीघ्र ही विखंडित हो जाता है। इसकी प्रक्रिया निम्न होती है:

यूरेनियम-236* → (क) + (ख) + न्यूट्रान (2 से 3 तक) + ऊर्जा

(क) और (ख) दो अपेक्षाकृत हल्के परमाणु हैं। यह सदैव निश्चित तत्वों

के न होकर विभिन्न तत्वों के रूप में उत्पन्न होते हैं। इस प्रक्रिया की तीन विशेषताएं हैं और परमाणु ऊर्जा उत्पादन की दृष्टि से तीनों ही अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

(1) जोड़े के रूप में उत्पन्न दो हल्के परमाणु (क) एवं (ख) सदैव ऐसे भार के होते हैं कि इन दोनों का तथा उत्पन्न न्यूट्रानों का संयुक्त भार, यूरेनियम-236 के उत्तेजित परमाणु के भार से कम होता है और यही कमी हमें आइन्स्टाईन के सिद्धांत के अनुसार अत्यधिक ऊर्जा के रूप में प्राप्त होती है। कभी-कभी विखंडन में दो के स्थान पर तीन हल्के परमाणु भी उत्पन्न होते हैं परन्तु उस स्थिति में भी तीनों परमाणुओं और न्यूट्रानों का संयुक्त भार विखंडित होने वाले यूरेनियम-236 के परमाणु के भार से कम होता है। यदि ऐसा न होता तो परमाणु ऊर्जा का योगदान इतना चमत्कारी न होता।

(2) विखंडन में उत्पन्न दो से तीन न्यूट्रानों का विशेष महत्व है। इन्हीं के कारण श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया स्थापित करना संभव हो सका है। इसकी विस्तार में हम चर्चा करेंगे। अभी इतना समझ लें कि दो से तीन न्यूट्रानों के स्थान पर एक या उससे भी कम (औसत संख्या) न्यूट्रान उत्पन्न होते तो विखंडन प्रक्रिया का उपयोग असंभव सा था। यदि तीन से अधिक निकलते तो परमाणु ऊर्जा और अधिक आकर्षक होती।

(3) प्रत्येक विखंडन में इतनी अधिक ऊर्जा उत्पन्न होती है जो कि सामान्य रासायनिक प्रक्रिया की तुलना में हज़ारों गुना अधिक होती है। इसीलिए परमाणु विखंडन से ऊर्जा प्राप्त करने में अपेक्षाकृत बहुत कम ईंधन का व्यय होता है।
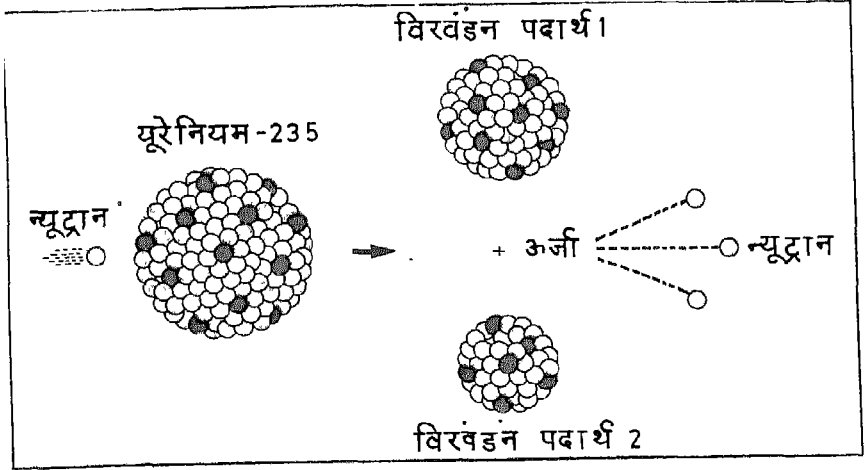
चित्र 9. विखंडन प्रक्रिया

उपरोक्त विखंडन प्रक्रिया को चित्र 9 में दिखलाया गया है। अब हम श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया की चर्चा और फिर इतनी आकर्षक परमाणु विखंडन प्रक्रिया की कुछ समस्याओं और उनके समाधान के तरीकों पर विचार करेंगे।

श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया

इस प्रक्रिया को चित्र 10 में दिखाया गया है। इसमें हम देखते हैं कि विखंडन प्रक्रिया आरंभ करने के लिए हमें एक न्यूट्रान मिल सके तो पहले विखंडन के बाद दो या तीन न्यूट्रान, जो इस विखंडन में उत्पन्न होंगे, वह यूरेनियम-235 के अन्य परमाणुओं में विखंडन उत्पन्न कर सकते हैं। फिर इन दो या तीन विखंडनों द्वारा उत्पन्न न्यूट्रान और अधिक परमाणुओं का विखंडन कर सकते हैं। इस प्रकार सिद्धांत रूप में
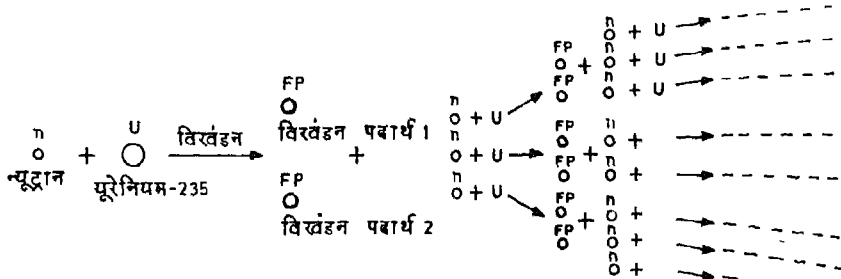
सिद्धांत रूप में यह श्रंखला बहुत तेज़ी से बढ़ती जाती है और अत्याधिक ऊर्जा प्रदान कर सकती है। वास्तव में श्रंखलाबद्ध प्रक्रिया स्थापित करने के लिए प्रत्येक विखंडन में उत्पन्न न्यूट्रानों में से कम से कम एक न्यूट्रान द्वारा एक और विखंडन उत्पन्न करना आवश्यक है।

चित्र 10. श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया

विखंडन प्रक्रिया बहुत तेज़ी से बढ़ सकती है और कुछ ही चरणों के बाद असीमित ऊर्जा उत्पन्न हो सकती है। विखंडन प्रक्रिया के इस श्रृंखलाबद्ध रूप में प्रसार को श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया कहते हैं। इसी चित्र से यह भी ज्ञात होता है कि यदि प्रति विखंडन द्वारा उत्पन्न दो या तीन न्यूट्रानों में से एक भी अगला विखंडन उत्पन्न न कर सके तो श्रृंखला टूट जाएगी और विखंडन प्रक्रिया बंद हो जाएगी। सिद्धांत रूप में इतनी सरल दिखने वाली प्रक्रिया को श्रृंखलाबद्ध रूप में कर पाने में अनेकों समस्याएं आती हैं, क्योंकि विखंडन में उत्पन्न न्यूट्रानों से ऐसा करा पाना इतना सरल नहीं है। ऐसा करने की समस्याओं को समझने से पहले श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया का महत्व कुछ और समझ लें।

1. यदि विखंडन में न्यूट्रान उत्पन्न न होते तो श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया स्थापित करने का प्रश्न ही नहीं उठता। उस स्थिति में जितने न्यूट्रान हम किसी और स्रोत से उपलब्ध करा पाते उसी के अनुरूप

कुछ विखंडन उत्पन्न कर सकते थे और बड़ी मात्रा में परमाणु ऊर्जा प्राप्त करना स्वप्न मात्र रह जाता। बहुत अधिक तीव्रता वाले न्यूट्रान स्रोत इतनी अधिक लागत वाले होते हैं कि आर्थिक दृष्टि से परमाणु ऊर्जा आकर्षक नहीं रहती।

2. यदि प्रति विखंडन एक न्यूट्रान ही उत्पन्न होता तो भी श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया स्थापित करना संभव न होता क्योंकि यह सुनिश्चित करना संभव नहीं है कि प्रत्येक उत्पन्न न्यूट्रान विखंडन करे। एक से कम न्यूट्रान (औसतन) उत्पन्न होने पर तो ऐसा सिद्धांत रूप में भी संभव न होता।

3. यदि प्रति विखंडन दो से कम (औसतन) न्यूट्रान उत्पन्न होते तो भी विखंडन प्रक्रिया का ऊर्जा उत्पादन या रिएक्टर निर्माण में उपयोग कठिन था। इसका कारण यह है कि विखंडन दर को बढ़ाने और निर्धारित दर पर ऊर्जा प्राप्ति के लिए हमें आरंभ में प्रति विखंडन एक से अधिक न्यूट्रान का उपयोग करना होगा। यदि प्रति विखंडन दो से कम न्यूट्रान उत्पन्न हों तो एक से अधिक न्यूट्रानों द्वारा विखंडन कराना असंभव नहीं तो अत्यन्त कठिन कार्य है।

उपरोक्त विवरण से हमें इस बात का पता लगता है कि विखंडन प्रक्रिया ने हमें ऐसी उपयुक्त न्यूट्रान संख्या प्रदान की है जिससे अधिक उत्पन्न होने पर तो लाभकर होते परन्तु कम होने पर हम इस प्रक्रिया के उतने उपयोग न कर पाते जितने संभव हो सके हैं।

अब यह समझने का प्रयत्न करेंगे कि प्रति विखंडन दो या तीन न्यूट्रानों का उत्पादन होने पर भी इनमें से एक का प्रयोग श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया स्थापित करने में क्या समस्याएं प्रस्तुत करता है और उनका हल कैसे निकाला गया।

विखंडन में उत्पन्न तीव्र न्यूट्रान (जिनकी ऊर्जा एवं गति बहुत

अधिक होती है) सरलता से बाहर जा सकते हैं और इस प्रकार विखंडन के लिए उपलब्ध नहीं होते।

इन तीव्र न्यूट्रानों की विखंडनीय पदार्थ जैसे यूरेनियम-235 में विखंडन उत्पन्न करने की संभावना अपेक्षाकृत कम होती है। यदि इनकी ऊर्जा को कम किया जा सके, जिसे मंदन प्रक्रिया कहते हैं तो इस संभावना को बढ़ाया जा सकता है। रिएक्टरों में ऐसा किया भी जाता है। परन्तु मंदन करने की प्रक्रिया में अनेक न्यूट्रान अन्य प्रक्रियाओं द्वारा (विखंडन के अतिरिक्त) खो जाते हैं अतः यह विखंडन उत्पन्न करने के लिए उपलब्ध नहीं होते।

यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक न्यूट्रान का अवशोषण विखंडन ही उत्पन्न करे। यदि हम प्राकृतिक यूरेनियम का उपयोग ईंधन के रूप में करें तो इसके अधिकांश (99.3%) परमाणु यूरेनियम-238 के होते हैं। मात्र 0.7% परमाणु यूरेनियम-235 के होते हैं जिनका विखंडन होता है। अतः इस बात की संभावना बहुत अधिक होती है कि विखंडन में उत्पन्न न्यूट्रानों को जिन परमाणुओं का सामना करना पड़े वे यूरेनियम-238 के हों। जब ऐसा होता है तो चित्र 11 में दिखाई गई प्रक्रिया द्वारा (जिसे
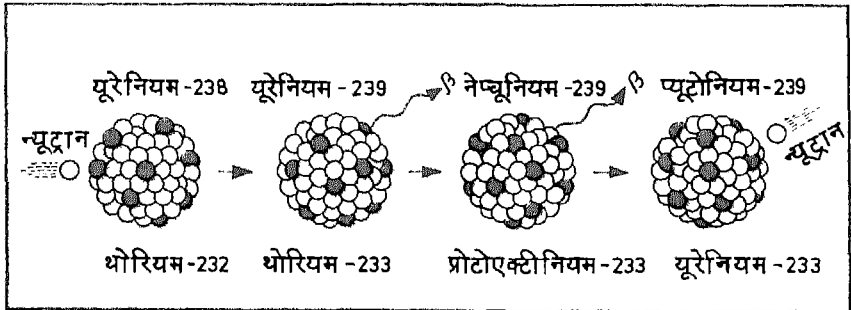
चित्र 11. यूरेनियम-238 और थोरियम-232 पर न्यूट्रान अवशोषण प्रक्रियाएं

न्यूट्रान अवशोषण प्रक्रिया कहते हैं) यूरेनियम–238 का परमाणु यूरेनियम-239 के परमाणु में बदल जाता है जो रेडियो सक्रिय होने के कारण प्लूटोनियम-239 के परमाणु में बदल जाता है। वैसे तो प्लूटोनियम-239 भी विखंडनीय पदार्थ है और मानव निर्मित दो विखंडनीय पदार्थों (प्लूटोनियम-239 और यूरेनियम-233) में से है, अतः अत्यन्त उपयोगी है। परन्तु जहां तक श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया स्थापित करने का प्रश्न है, इस प्रक्रिया में काम आने वाला न्यूट्रान व्यर्थ ही व्यय होता है। प्लूटोनियम-239 बनने की इस प्रक्रिया का उपयोग सामान्य रिएक्टरों और विशेष रूप से प्रजनन रिएक्टरों में अत्यन्त महत्वपूर्ण है और इसकी चर्चा आगे करेंगे। इसी प्रकार की यूरेनियम-233 उत्पादन प्रक्रिया को भी ऊपर वाले चित्र में दिखाया गया है।

ऊपर बतलाए गए कुछ कारणों से आभास मिलता है कि विखंडन में उत्पन्न न्यूट्रानों को खो देना कितना संभावित है और श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया स्थापित करने में क्या प्रमुख कठिनाइयाँ हैं जिनका सामना एनरिको फरमी को करना पड़ा होगा। विशेषरूप से प्राकृतिक यूरेनियम के ईंधन रूप में प्रयोग करने पर, जिसमें मात्र 0.7% परमाणु विखंडनीय पदार्थ यूरेनियम-235 के होते हैं, और श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया स्थापित करना कितना महत्वपूर्ण अनुसंधान रहा होगा। ऊपर बतलाई समस्याओं के समाधान को हम परमाणु रिएक्टर के वास्तविक उदाहरण के अध्ययन से समझेंगे। परन्तु इससे पहले दो और बातें समझना उपयोगी होगा।

श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया के संदर्भ में बताया गया था कि यदि प्रति विखंडन से उत्पन्न न्यूट्रानों में से एक अगला विखंडन उत्पन्न करे तो विखंडन प्रक्रिया को उसी निश्चित् दर से निरंतर करते रहना संभव होता है। इस स्थिति को रिएक्टर का क्रांतिक होना या क्रिटिकल होना कहते हैं। इसका अर्थ रिएक्टर में कुछ गड़बड़ी होना या उसकी दशा बिगड़ना नहीं है जैसा

कि शब्द "क्रिटिकल" से आभास मिलता है। ऐसी स्थिति में एक निश्चित् दर से विखंडन प्रक्रिया स्थापित हो जाती है और हमें ऊर्जा प्राप्त होने लगती है। यदि प्रति विखंडन से उत्पन्न न्यूट्रानों में से एक से अधिक न्यूट्रान विखंडन उत्पन्न करे तो इसे प्रक्रिया दर का अतिक्रांतिक या सुपर क्रिटिकल होना कहते हैं। ऐसी स्थिति में विखंडन दर में निरंतर वृद्धि होती जाती है और ऊर्जा उत्पादन दर भी निरंतर बढ़ती जाती है। यदि अतिक्रांतिकता बहुत अधिक हो और नियंत्रण में न हो तो शीघ्र ही ऊर्जा अत्यधिक बढ़ कर विस्फोट उत्पन्न कर सकती है। इस स्थिति का उपयोग परमाणु बम बनाने में किया जाता हैं। इसके विपरीत यदि प्रति विखंडन में उत्पन्न न्यूट्रानों में से एक से कम (औसतन) न्यूट्रान ही अगला विखंडन उत्पन्न करे तो श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया धीरे धीरे बंद होने लगती है और ऊर्जा उत्पादन दर भी घटने लगती है। इस स्थिति को अवक्रांतिकता या सब-क्रिटिकेलिटी कहते हैं और रिएक्टर को अवक्रांतिक या सबक्रिटिकल। परमाणु रिएक्टरों के संचालन में तीनों ही स्थितियों का प्रयोग किया जाता है। आरंभ में उसे क्रांतिक किया जाता है फिर विखंडन या ऊर्जा उत्पादन दर बढ़ाने के लिए उसे नियंत्रित रूप में अतिक्रांतिक करते हुए निर्धारित विखंडन या ऊर्जा उत्पादन दर पर ले जाते हैं। अतिक्रांतिकता प्राप्त करने के लिए मंदक का तल बढ़ाते हैं जिससे अधिक न्यूट्रानों का मंदन होकर विखंडन दर बढ़े या नियंत्रण छड़ों को बाहर की ओर निकालते हैं। नियंत्रण छड़ें न्यूट्रानों का अत्यधिक अवशोषण करने वाले पदार्थों, जैसे बोरान या कैडमियम, नामक तत्वों की बनी होती हैं। यह विखंडन न्यूट्रानों का अवशोषण कर क्रांतिकता को कम करती हैं। प्रायः ऊर्जा उत्पादन दर बढ़ाने के लिए मंदक तल बढ़ाना और नियंत्रण छड़ों का बाहर निकालना दोनों ही को साथ-साथ किया जाता है। इसके विपरीत रिएक्टर को बंद करने या

अवक्रांतिकता बढ़ाने के लिए नियंत्रण छड़ों को अंदर डालना और मंदक तल को कम करना एक साथ किया जाता है। निर्धारित दर पर ऊर्जा उत्पादन बनाए रखने के लिए विखंडन दर में होने वाले थोड़े बहुत परिवर्तनों को निश्चित दर पर बनाए रखने के लिए स्वचालित नियंत्रण छड़ों को ऊपर नीचे या अंदर बाहर करके रखा जाता है।

इस संदर्भ में यह बता देना उपयोगी होगा कि रिएक्टर संचालन पद्धति "फेल-सेफ" सिद्धांत पर आधारित होती है। इसका अर्थ यह है कि उसके संचालन में कोई गड़बड़ी आने पर, जिससे अतिक्रांतिकता नियंत्रण के बाहर जाने की संभावना उत्पन्न हो सके, रिएक्टर स्वतः (बिना चालक के) बंद हो जाएगा और सुरक्षित अवस्था को प्राप्त कर लेगा। ऐसा इसलिए किया जाता है कि उपकरणों में गड़बड़ी आने पर या आपरेटर (चालक) द्वारा गलती हो जाने की अवस्था में रिएक्टर में विस्फोट की संभावना या पर्यावरण को नुकसान की कोई संभावना न हो। इस प्रणाली के उपयोग से कई बार छोटी मोटी ख़राबी उत्पन्न होने पर (और उसके उपयुक्त समय में सुधर न सकने की स्थिति में) रिएक्टर के स्वतः बंद हो जाने से ऊर्जा उत्पादन में अवरोध उत्पन्न हो जाता है परन्तु सुरक्षा को सर्वोपरि मानने के कारण इस प्रकार की हानि उठाना स्वीकार किया जाता है न कि कोई ख़तरा मोल लेना। ऐसी स्थिति अतिक्रांतिकता के बढ़ने से भी होती है जो कई अन्य कारणों से उत्पन्न हो सकती है जैसे बिजली के चले जाने से कुछ उपकरणों द्वारा काम करना बंद कर देना, शीतलक के प्रवाह में अवरोध आने से ईंधन का तापमान बढ़ जाना आदि। इस स्वचालित "फेल सेफ" पद्धति के लिए ऐसी संरचना का प्रयोग किया जाता है जो बिजली आदि पर निर्भर नहीं करती। उदाहरण के तौर पर मंदक कक्ष के नीचे एक ऐसा भंडार कक्ष होता है जिसमें मंदक गुरुत्वाकर्षण सिद्धांत द्वारा स्वतः चला जाता है

और रिएक्टर से मंदक के निकलते ही श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया स्वतः बंद हो जाती है, आदि।

यदि प्राकृतिक यूरेनियम में विखंडनीय पदार्थ यूरेनियम-235 0.7 प्रतिशत भी उपलब्ध न होता तो परमाणु ऊर्जा का विकास करना शायद स्वप्न ही रह जाता। न तो एनरिको फरमी का रिएक्टर ही चल पाता और न ही उसके बाद के कोई उपयोग विकसित होते, क्योंकि मानव निर्मित अन्य दोनों विखंडनीय पदार्थ प्लूटोनियम-239 और यूरेनियम-233 भी प्राकृतिक यूरेनियम पर आधारित रिएक्टरों के निर्माण से ही संभव हो सके हैं और परमाणु एवं हाइड्रोजन बम भी प्राकृतिक यूरेनियम में से यूरेनियम-235 को निकालने और परिष्कृत करने से संभव हो सके हैं। अतः प्रकृति की देन (यद्यपि बहुत कम प्रतिशत मात्रा में ही सही) यूरेनियम-235 ही परमाणु ऊर्जा के विकास का आधार है। जहां हम प्रकृति की इस देन को सराहते हैं वहीं वैज्ञानिकों की सूझबूझ और महत्वपूर्ण योगदानों का भी लोहा मानना होगा जिन्होंने न केवल इस देन को पहचाना बल्कि उसका पूर्णरूप से उपयोग कर मनुष्य को एक ऐसा नया ऊर्जा स्रोत प्रदान किया जो अत्यधिक शक्तिशाली ही नहीं है, मानव उपयोग के अन्य कार्यों में भी अत्यन्त उपयोगी कार्य करने में सक्षम रहा है।

□□□

4

तापीय अनुसंधान रिएक्टर 'साइरस'

भारत का पहला अनुसंधान रिएक्टर ''अप्सरा'' सन् 1956 में भारतीय वैज्ञानिकों ने अपने प्रयत्नों से बनाया था और इसका उद्‌घाटन एवं नामकरण प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने किया था। यह आज भी कार्य कर रहा है और अत्यन्त उपयोगी भूमिका निभा रहा है। इसे चित्र 12 में दिखाया गया है। इसे स्विमिंग पूल रिएक्टर कहते हैं। इसमें प्रयुक्त आरंभिक ईंधन परिष्कृत यूरेनियम (जिसमें यूरेनियम-235 की मात्रा प्राकृतिक रूप में उपलब्ध यूरेनियम में मिलने वाली 0.7 प्रतिशत न होकर लगभग 80 प्रतिशत थी) इंग्लैंड से प्राप्त हुआ था। इस ईंधन को एक सादे पानी के कुंड में लटकाया गया है इसीलिए इसे स्विमिंग पूल रिएक्टर कहते हैं। इसमें सादा पानी मंदक एवं शीतलक का कार्य करता है। सादे पानी के मंदक एवं शीतलक के रूप में प्रयोग करने पर परिष्कृत ईंधन का उपयोग श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया स्थापित करने के लिए अनिवार्य हो जाता है क्योंकि सादा पानी, भारी पानी की अपेक्षा न्यूट्रानों का अवशोषण अधिक करता है अतः प्राकृतिक यूरेनियम में श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया के लिए आवश्यक एक न्यूट्रान प्रति विखंडन अगले विखंडन के लिए नहीं उपलब्ध करा पाता। इस रिएक्टर के बारे में हम
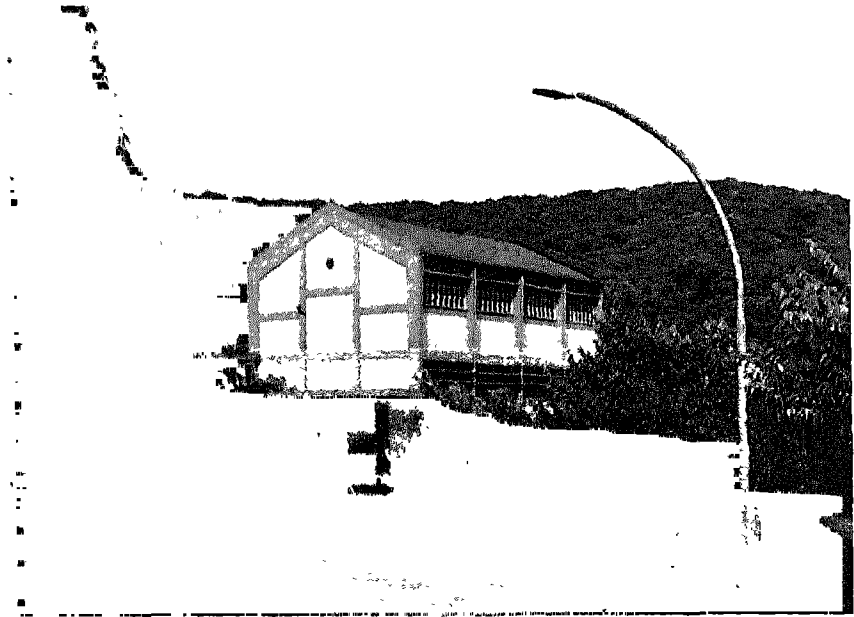
चित्र 12. "अप्सरा" रिएक्टर

और चर्चा इसलिए नहीं करेंगे क्योंकि हमारा उद्देश्य परमाणु बिजलीघरों की कार्यप्रणाली समझना है जो इससे बहुत भिन्न है। इसीलिए हम दूसरे अनुसंधान रिएक्टर "साइरस" की चर्चा करेंगे जो भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, बम्बई में सन् 1960 से कार्य कर रहा है। इस रिएक्टर का निर्माण कनाडा के सहयोग से किया गया था। इस तापीय रिएक्टर की ताप उत्पादन शक्ति 40 मेगावाट है। इसको चित्र 13 में तथा इसकी कार्य प्रणाली को चित्र 14 में दिखाया गया है। इसे समझने का प्रयत्न हम इसी चित्र के माध्यम से करेंगे।

रिएक्टर के केन्द्रीय भाग को केलेन्ड्रिया कहते हैं। यह कई मीटर मोटी सीमेंट की दीवार वाला बेलनाकार कक्ष होता है जिसके अन्दर ईंधन छड़ें, नियंत्रण छड़ें, मंदक आदि रहते हैं और शीतलक निरंतर ईंधन छड़ों के चारों ओर बने वलयाकार (एन्यूलर) भाग से प्रवाहित होता रहता है। ईंधन छड़ों वाले भाग को रिएक्टर क्रोड (रिएक्टर कोर) कहते हैं। ईंधन छड़ों की संरचना भी काफ़ी सूक्ष्मता वाली होती है। प्रत्येक छड़ को दो दीवारों वाले एल्यूमिनियम के खोल के रूप में बनाना होता है। इसके केन्द्रीय भाग में प्राकृतिक यूरेनियम होता है जो कि इस
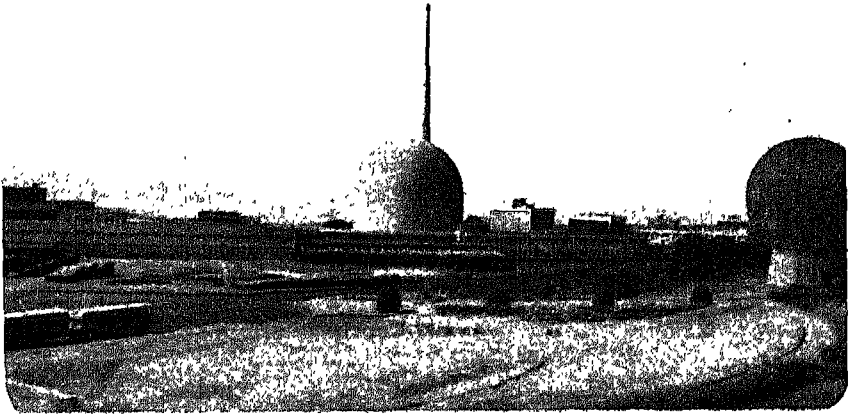
चित्र 13. "साइरस" रिएक्टर
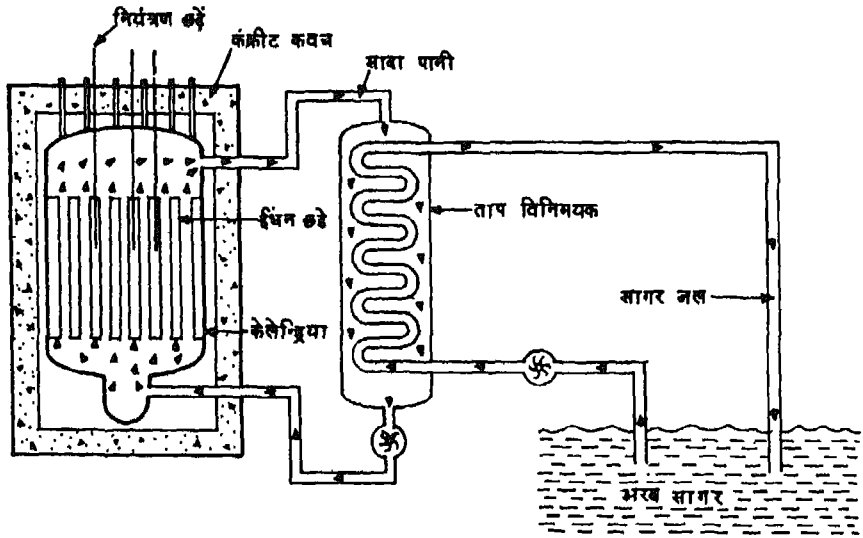
चित्र 14. "साइरस" रिएक्टर की कार्यप्रणाली

रिएक्टर का ईंधन है। इसके चारों ओर के वलयाकार भाग से सादे पानी को निरंतर प्रवाहित किया जाता है जो कि प्राथमिक शीतलक है। कुछ इसी प्रकार की संरचना नियंत्रण छड़ों की होती है। उन्हें भी एल्यूमिनियम के खोल में न्यूट्रान का अत्यधिक अवशोषण करने वाले पदार्थ बोरान कारबाइड को भरकर बनाया जाता है। इन छड़ों को डालने के बाद केलेन्ड्रिया को मंदक (भारी पानी) से भर दिया जाता है। प्राथमिक शीतलक को ईंधन छड़ों से ताप विनियमकों में भेजा जाता है जहां शीतलक की ताप ऊर्जा को द्वितीय शीतलक (सागर जल) को

प्रदान किया जाता है। इस सागर जल को सागर से ठंडे जल के रूप में ताप विनियमक से प्रवाहित किया जाता है और गर्म जल को पुन: सागर में छोड़ दिया जाता है। इस प्रकार प्राथमिक शीतलक तो एक बंद परिपथ में प्रवाहित होता रहता है परन्तु द्वितीयक शीतलक, सागर जल, एक खुले परिपथ के रूप में होता है।

केलेन्ड्रिया की मोटी दीवार जैविक कवच (जैविक शील्ड) का भी कार्य करती है अर्थात् इस दीवार के चारों ओर वैज्ञानिक अपने अनुसंधान उपकरण लगाकर अनुसंधान कर सकते हैं। उन्हें वहां कार्य करने में विखंडन में उत्पन्न विकिरणों से कोई जैविक हानि का भय नहीं रहता। केलेन्ड्रिया के क्रोड भाग से कुछ नलियों द्वारा न्यूट्रान पुंजों को बाहर लगे उपकरणों तक लाया जाता है जहां उनका उपयोग विभिन्न प्रयोगों के लिए किया जाता है। इसी प्रकार की नलियों के माध्यम से विभिन्न पदार्थों को क्रोड में भेजा जाता है जिससे रेडियोआइसोटोपों का उत्पादन भी किया जाता है।

केलेन्ड्रिया और उसके चारों ओर के भागों को चित्र 13 में दिखने वाले शिवलिंग आकार के अंतरविष्ट कक्ष (कन्टेनमेंट) के अन्दर रखा गया है। इसे इतना मज़बूत बनाया जाता है कि इसके अन्दर स्थित रिएक्टर में कुछ गड़बड़ी या दुर्घटना होने की स्थिति में उत्पन्न अधिक दबावों को यह झेल सके और विकिरण को बाहर के वातावरण में न आने दे। इस शिवलिंग आकार की इमारत के अन्दर वायु का दबाव भी वातावरण के सामान्य दबाव से कुछ कम रखा जाता है ताकि बाहर की वायु तो अन्दर जा सके परन्तु अंदर दबाव कम होने के कारण, अन्दर की वायु बाहर न आ सके। सुरक्षा के दो और भी उपाय इस रिएक्टर में किए गए हैं। पहला तो यह कि इस पूरी इमारत की वायु को विशेष प्रकार के छानकों से प्रवाहित कर पास ही बनी लगभग 130 मीटर ऊंची चिमनी से

वातावरण में छोड़ा जाता है। इस प्रकार पूरे कणिकीय पदार्थ और अधिकांश गैसीय रेडियोसक्रिय पदार्थों को यह छानक रोक लेते हैं और वातावरण में नहीं जाने देते हैं। जो कुछ गैसीय रेडियोसक्रिय पदार्थ वातावरण में चिमनी से जाते भी हैं वह भी सदैव अपेक्षित मात्रा से कम ही होते हैं। इसके लिए उनका निरंतर मापन किया जाता है और आवश्यकता पड़ने पर इन्हें भी इमारत के अन्दर ही रोका जा सकता है।

दूसरा सुरक्षा उपाय इस इमारत में प्रवेश करने के विशेष प्रवेश द्वार के रूप में किया गया है। इस इमारत में प्रवेश करने के लिए आपको दो द्वार पार करने होते हैं। दोनों ही बहुत मोटे और मज़बूत लोहे के किवाड़ वाले हैं। जिनमें से प्रत्येक का भार कई टन होता है। पहला द्वार तभी खुलेगा जब अंदर का द्वार बंद हो। इस प्रकार आपको पहले द्वार से अंदर जाकर दोनों द्वारों के बीच वाले भाग में खड़ा रहना होता है। जब मुख्य द्वार पूरी तरह बंद हो जाएगा तभी आप दूसरा द्वार खोल सकते हैं। जब दूसरा अंदर वाला द्वार खुलता है तो पहला द्वार नहीं खोला जा सकता। इस प्रक्रिया में अंदर के कक्ष में वायु का दबाव कम होने के कारण बाहर की कुछ वायु अंदर तो जा सकती है परन्तु अंदर की वायु बाहर नहीं आ सकती। नियंत्रण कक्ष आदि इस इमारत के बाहर बनाए गए हैं। इस प्रकार आप देखते हैं कि पर्यावरण और व्यक्तिगत सुरक्षा के अनेकों उपाय किए गए हैं जिन पर काफ़ी अधिक धन भी व्यय होता है परन्तु परमाणु ऊर्जा उद्योग ने आरंभ से ही सुरक्षा और संरक्षण को बहुत महत्व दिया है और इनके लिए किए गए सभी उपायों और उन पर होने वाले व्यक्तियों और धन के रूप में अतिरिक्त व्यय को उपयुक्त माना है। इसी नीति को अपनाने के कारण आज विश्व स्तर पर परमाणु ऊर्जा उद्योग के सुरक्षा और संरक्षण आंकड़े अन्य उद्योगों की अपेक्षा अत्यन्त संतोषजनक हैं।

मूल संरचना देखने के बाद अब हम देखेंगे कि रिएक्टर को कैसे संचालित किया जाता है। सबसे पहले प्राथमिक और द्वितीयक शीतलक के प्रवाह को चालू कर सुनिश्चित किया जाता है कि विखंडन प्रक्रिया स्थापित होने पर ऊष्मा के प्रवाह में कोई रुकावट नहीं आएगी। फिर नियंत्रक छड़ों को बाहर निकाला जाता है और केलेन्ड्रिया में भारी पानी भरना आरंभ किया जाता है। इससे पहले सभी ईंधन छड़ों को लटकाया जा चुका होता है और न्यूट्रान के स्रोत को क्रोड के पास रखा जा चुका होता है। धीरे-धीरे जैसे भारी पानी का तल ऊंचा होता जाता है परमाणु विखंडन की दर बढ़ती है परन्तु श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया स्थापित होने में अभी समय है और रिएक्टर अवक्रांतिक अवस्था में होता है। भारी पानी का तल जब निर्धारित तल के निकट पहुंचता है तब यह विखंडन दर काफ़ी बढ़ चुकी होती है और जैसे ही यह क्रांतिकता की स्थिति में पहुंचती है तो न्यूट्रान स्रोत को क्रोड से बाहर निकाला जाता है और उससे मिलने वाले न्यूट्रानों की कमी को पूरा करने के लिए भारी पानी के तल को और ऊंचा करते हैं और नियंत्रण छड़ों को स्वचालित पद्धति से उसी कम शक्ति स्तर पर रिएक्टर को क्रांतिकता की स्थिति में बनाए रखने के लिए प्रयोग करते हैं। कुछ समय कम शक्ति पर रिएक्टर चलाकर सभी उपकरणों के सही संचालन की जांच की जाती है फिर इसकी शक्ति को बढ़ाने के लिए कुछ समय के लिए उसे अतिक्रांतिक करते हैं। इसे करने के लिए भारी पानी के तल को और ऊंचा करना तथा नियंत्रण छड़ों को बाहर निकालना होता है। प्रायः यह दोनों ही कार्य सुनियोजित ढंग से एक साथ किए जाते हैं फिर अपेक्षित स्तर पर पहुंचने पर रिएक्टर को उसी स्तर पर क्रांतिक रखा जाता है। रिएक्टर बंद करने के लिए इसकी विपरीत प्रक्रिया अपनाई जाती है। बंद करने में समय नहीं लगता क्योंकि इसके लिए नियंत्रण छड़ों को अंदर डालना और भारी पानी के तल को जल्दी

कम करना संभव होता है। ऐसी ही संचालन प्रणाली का उपयोग परमाणु बिजलीघरों में होता है। इनके डिजाइन में यह व्यवस्था होती है कि किसी भी स्थिति में अतिक्रांतिकता नियंत्रण के बाहर न हो सके और रिएक्टर में विस्फोट की संभावना न उत्पन्न हो सके।

□□□

5

तीव्र रिएक्टर

अभी तक बताए गए रिएक्टर प्राकृतिक यूरेनियम ईंधन पर आधारित हैं जिनमें मंदक के प्रयोग से विखंडन प्रक्रिया द्वारा उत्पन्न न्यूट्रानों को मंदित किया जाता है। ऐसा करने से उनकी विखंडन करने की संभावना को बढ़ाया जाता है। मंदन के पश्चात न्यूट्रानों की ऊर्जा एवं गति लगभग उतनी ही हो जाती है जितनी सामान्य वातावरण के तापमान पर होती है। इसीलिए इस प्रकार के रिएक्टरों को तापीय रिएक्टर भी कहते हैं। इस देश में अब तक बने परमाणु बिजलीघर और अनुसंधान रिएक्टर "अप्सरा", "साइरस" एवं "ध्रुव" (चित्र 15)
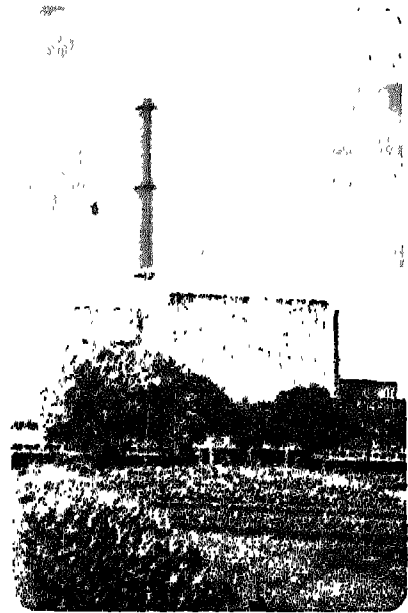
चित्र 15. "ध्रुव" रिएक्टर

तापीय रिएक्टर हैं। प्राकृतिक यूरेनियम के ईंधन रूप में प्रयोग से तापीय रिएक्टर ही बनाना संभव है क्योंकि इसमें विखंडनीय आइसोटोप यूरेनियम-235 की मात्रा इतनी कम होती है कि बिना विखंडन न्यूट्रानों का मंदन किए और विखंडन उत्पन्न करने की संभावना बढ़ाए श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया स्थापित करना संभव नहीं होता है।

मानव निर्मित प्लूटोनियम-239 और यूरेनियम-233 तथा परिष्कृत यूरेनियम (जिसमें यूरेनियम-235 की मात्रा प्राकृतिक रूप में मिलने वाली 0.7% न होकर 95% से भी अधिक तक प्राप्त की जा सकती है) जैसे विखंडनीय पदार्थों के ईंधन के रूप में उपयोग के लिए उपलब्ध होने से हमें ऐसे रिएक्टरों के निर्माण की संभावना प्राप्त हुई है जिनमें मंदक के प्रयोग की आवश्यकता न हो और विखंडन प्रक्रिया में उत्पन्न तीव्र न्यूट्रानों का ही प्रयोग श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया स्थापित करने में किया जा सके। ऐसा इसलिए संभव होता है क्योंकि तीव्र न्यूट्रानों की विखंडन संभावना तापीय न्यूट्रानों की अपेक्षा बहुत कम होते हुए भी, इनमें विखंडनीय पदार्थ के अपेक्षाकृत इतने अधिक परमाणु उपलब्ध होते हैं कि श्रंखलाबद्ध प्रक्रिया स्थापित करना संभव होता है। ऐसे रिएक्टरों को तीव्र रिएक्टर कहते हैं।

अब प्रश्न उठता है कि यदि विखंडनीय पदार्थों में तीव्र विखंडन न्यूट्रानों के उपयोग से श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया स्थापित करना संभव भी हो तो क्या इससे लाभ है? एक लाभ यह है कि मंदक की आवश्यकता नहीं होती और इस कारण रिएक्टर का आकार छोटा किया जा सकता है। सबसे महत्वपूर्ण लाभ ऐसे रिएक्टरों में प्रजनन की क्षमता का होना है। प्रजनन से तात्पर्य है कि जितना ईंधन रिएक्टर में जले उससे अधिक उत्पन्न हो। यह विलक्षण और चमत्कारिक प्रक्रिया केवल परमाणु ऊर्जा में ही संभव है। यह कैसे हो सकता है? आइए इसे समझें।

प्रति विखंडन प्रक्रिया में उत्पन्न दो से तीन न्यूट्रानों को सामान्य तापीय रिएक्टरों में मंदित करते हैं। इस प्रक्रिया में न्यूट्रानों की बहुत काफ़ी संख्या अन्य विभिन्न तरीकों से व्यय हो जाती है और विखंडन उत्पन्न नहीं कर पाती। यह अन्य तरीके हैं उनका ईंधन या उपस्थित अन्य पदार्थों के परमाणुओं द्वारा अवशोषण और उनके रेडियोआइसोटोपों का निर्माण, न्यूट्रानों का रिएक्टर के बाहर निकल जाना आदि। श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया स्थापित करने के लिए प्रति विखंडन कम से कम एक न्यूट्रान को और आगे विखंडन करना अनिवार्य है, अतः उत्पन्न दो से तीन न्यूट्रानों में से एक इसमें काम आ जाता है। तापीय रिएक्टरों में ऊपर बताए तरीकों से इतना अधिक न्यूट्रानों का व्यय होता है कि औसत रूप में उत्पन्न 2 से 3 न्यूट्रानों में 1 से कुछ ही अधिक विखंडन एवं अन्य प्रक्रियाओं के लिए उपलब्ध होते हैं और 1 न्यूट्रान के विखंडन करने में काम आने के बाद न्यूट्रानों की बहुत बड़ी मात्रा अन्य उपयोगों के लिए नहीं बचती है। फिर भी तापीय रिएक्टरों में मंदन आदि करना आवश्यक है अन्यथा श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया स्थापित ही नहीं की जा सकती। इसके विपरीत तीव्र रिएक्टरों में मंदन की आवश्यकता न होने और आकार का बहुत छोटा होने के कारण न्यूट्रानों का व्यर्थ व्यय बहुत कम होता है और न्यूट्रानों की अपेक्षाकृत बहुत अधिक संख्या अन्य कार्यों के लिए उपलब्ध होती है। इन अतिरिक्त न्यूट्रानों का उपयोग विखंडनशील पदार्थों (प्राकृतिक यूरेनियम एवं थोरियम) को ऊपर बताए गए विखंडनीय पदार्थों में परिवर्तित करने में किया जा सकता है। जिन रिएक्टरों में इस प्रक्रिया के उपयोग से जितना ईंधन जलता है उससे अधिक या उतना ही ईंधन उत्पन्न किया जाता है, उन्हें प्रजनन रिएक्टर कहते हैं। भाभा परमाणु अनुसंधान में "पूर्णिमा-1" और "पूर्णिमा-2" नामक तीव्र रिएक्टर इस दिशा में आंकड़े प्राप्त करने और तीव्र रिएक्टर तकनीकी का अध्ययन करने के लिए बनाए गए थे।

इनके पश्चात् मद्रास के पास कलपक्कम के इंदिरा गांधी परमाणु अनुसंधान केंद्र में 1 तीव्र प्रजनन परीक्षण रिएक्टर (फास्ट ब्रीडर टेस्ट रिएक्टर) का निर्माण किया गया जिसने वर्ष 1985 में कार्यारम्भ किया है। आगे जब हम इस देश के परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम की चर्चा करेंगे तो पता लगेगा कि इस प्रकार के रिएक्टरों का इस देश के परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम में विशेष महत्व है। इस परीक्षण रिएक्टर से हमें कुछ समय बाद लगभग 15 मेगावाट बिजली भी प्राप्त हो सकेगी। इससे प्राप्त अनुभव के आधार पर तीव्र प्रजनन बिजलीघर के निर्माण की भी योजना है। ऐसे रिएक्टरों में प्रजनन कैसे होता है? अन्य समस्याएं क्या हैं? इन प्रश्नों का उत्तर पाने के लिए हम तीव्र प्रजनन परीक्षण रिएक्टर की प्रणाली का कुछ और अध्ययन करेंगे। इस रिएक्टर को चित्र 16 में और इसकी सरल कार्यप्रणाली को चित्र 17 में दिखाया गया है।

इस कार्यप्रणाली की तुलना यदि हम ''साइरस'' तापीय रिएक्टर से करें तो निम्न प्रमुख अन्तर पाते हैं।

इसमें मंदक का प्रयोग नहीं किया गया है अतः आकार बहुत छोटा है।
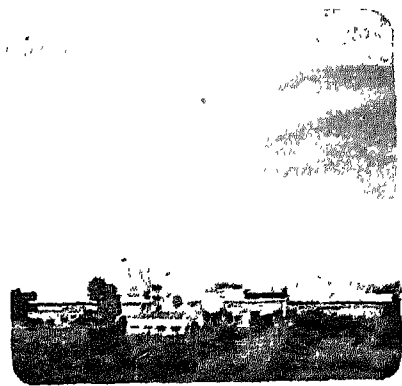
चित्र 16. तीव्र प्रजनन परीक्षण रिएक्टर

ईंधन में भिन्नता है, इसमें प्राकृतिक यूरेनियम के स्थान पर प्लूटोनियम-239 और यूरेनियम के मिश्र कारबाइड का प्रयोग ईंधन के रूप में किया गया है।
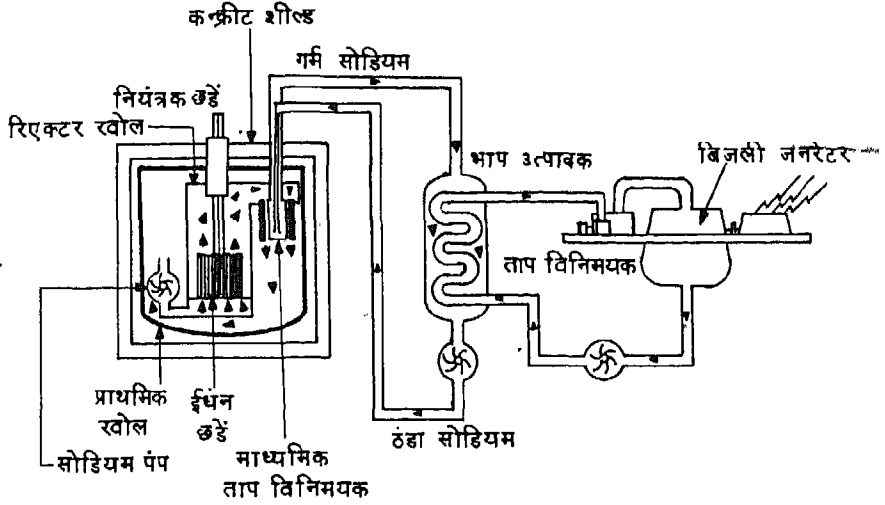
चित्र 17. तीव्र प्रजनन परीक्षण रिएक्टर की कार्यप्रणाली

इसमें शीतलक के रूप में द्रव सोडियम तत्व का प्रयोग भारी पानी के स्थान पर किया गया है। ऐसा इसलिए करना पड़ता है क्योंकि रिएक्टर के छोटे आकार के साथ ही ईंधन छड़ों के अपेक्षाकृत छोटे आकार में उत्पन्न अत्यधिक ऊष्मा या ताप को बाहर संचारित करने के लिए जल उपयुक्त नहीं है। उसकी ऊष्मा या ताप धारकता अपेक्षाकृत कम होने के कारण उतनी सक्षमता से ऊष्मा को ताप विनिमयकों तक नहीं संचारित कर सकता। यह कार्य केवल द्रव सोडियम तत्व ही सक्षमता से कर सकता है।

इन भिन्नताओं से जुड़ी प्रमुख समस्याएं यह हैं।

1. द्रव सोडियम के उपयोग से जुड़ी समस्याएं। सोडियम को द्रव अवस्था में रखने के लिए उसका तापमान बढ़ाना होता है अर्थात् गर्म

करना होता है। सोडियम का वायु के संपर्क में आना ख़तरनाक हो सकता है क्योंकि यह आग पकड़ लेता है अतः इसके प्रवाह की प्रणाली बहुत जटिल होती है।

2. ऐसे रिएक्टर का नियंत्रण भी तीव्र न्यूट्रानों के नियंत्रण पर आधारित होता है। यह भी अनेकों समस्याएं प्रस्तुत करता है। आशा है इन समस्याओं का अध्ययन और संतोषजनक समाधान कलपक्कम के परीक्षण रिएक्टर से शीघ्र प्राप्त हो सकेगा और फिर इसमें उपलब्ध बहुत अधिक न्यूट्रानों के उपयोग से ईंधन का प्रजनन किया जा सकेगा। ऐसे रिएक्टरों में प्रजनन कर भारत के थोरियम के अपार भंडार का पूरा उपयोग हम अपनी ऊर्जा समस्या को सुलझाने में कर सकें। यही परमाणु ऊर्जा के तीसरे चरण के कार्यान्वयन की कुंजी है (जिसकी चर्चा अगले खंड में की गई है)।

अब हम परमाणु बिजलीघर की संरचना का अध्ययन करेंगे जो मूल रूप से "साइरस" अनुसंधान रिएक्टर जैसे ही हैं।

6

परमाणु बिजलीघर

परमाणु बिजलीघर के कई भाग कोयला या तेल चालित बिजलीघरों जैसे ही होते हैं। दोनों में ही पानी को भाप में बदला जाता है। इस भाप को टरबाइन नामक यंत्र से प्रवाहित करते हैं। टरबाइन के घूमने से जनरेटर घूमता है और बिजली उत्पन्न करता है। प्रमुख अन्तर भाप को उत्पन्न करने के तरीके में होता है। जैसा कि बताया जा चुका है कि कोयला या तेल चालित बिजलीघरों में इन ईंधनों को दहन कक्ष में जलाते हैं और इससे उत्पन्न ऊष्मा या ताप द्वारा बाइलर के पानी को भाप में बदला जाता है जिसे टरबाइन को भेजा जाता है। गैस पर आधारित बिजलीघरों में ऐसा ही होता है। परमाणु बिजलीघरों में परमाणु विखंडन प्रक्रिया द्वारा उत्पन्न ऊष्मा या ताप को शीतलक द्वारा रिएक्टर से ताप विनिमयकों को भेजा जाता है, शीतलक सीधा ही भाप उत्पन्न नहीं करता है। विनिमयक में शीतलक की ऊष्मा सादे पानी को प्रदान की जाती है जो भाप बन कर टरबाइन को जाता है। ऐसा इसलिए करना होता है क्योंकि शीतलक अत्यन्त शुद्ध पदार्थ का होता है और इसे शुद्ध बनाए रखने के लिए एक बंद परिपथ में प्रवाहित किया जाता है। यह बहुत महंगा भी होता है। ताप विनिमयक वास्तव में दो दीवार वाली
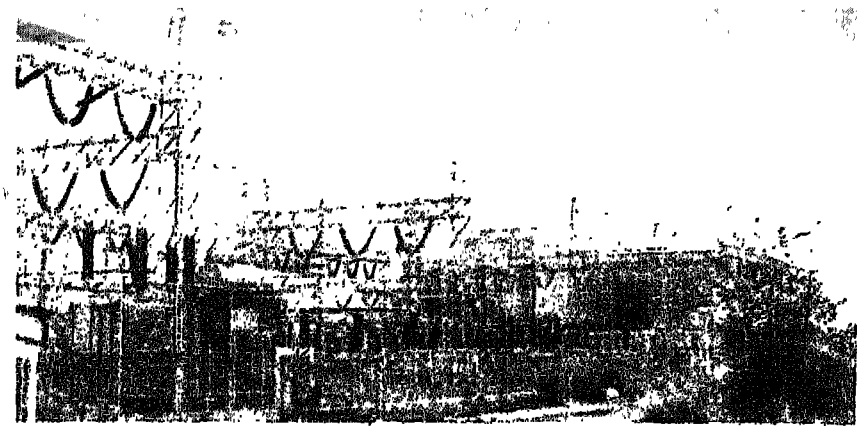
चित्र 18. राजस्थान परमाणु बिजलीघर

नलियाँ होती हैं जिनमें केंद्र वाली नली से शीतलक प्रवाहित किया जाता है और उसके बाहरी खोल से सादा पानी। इस प्रकार शीतलक अपनी ऊष्मा सादा पानी को प्रदान करता है और ठंडा हो जाता है। इस अपेक्षाकृत ठंडे शीतलक को फिर रिएक्टर में प्रवाहित किया जाता है। इस मूल प्रक्रिया को समझने के बाद हम कोटा, राजस्थान में कार्य कर रहे परमाणु बिजलीघर की संरचना देखेंगे। कलपक्कम, मद्रास के बिजलीघर भी ऐसी ही संरचना के हैं और अन्य निर्माणाधीन एवं प्रस्तावित बिजलीघर मूलतया ऐसे ही होंगे। इस बिजलीघर को चित्र 18 में और इसकी कार्यप्रणाली को चित्र 19 में दिखाया गया है।

''साइरस'' अनुसंधान रिएक्टर और उपरोक्त परमाणु बिजलीघरों में प्रयुक्त रिएक्टरों में समानताएं ये हैं कि दोनों में ही प्राकृतिक यूरेनियम का उपयोग ईंधन के रूप में और भारी पानी का उपयोग मंदक और शीतलक के रूप में किया जाता है। वास्तविक संरचना में अनेकों अंतर हैं। उदाहरण के लिए ''साइरस'' में ईंधन छड़ें उर्ध्वाधर (खड़ी) रूप में हैं जबकि बिजलीघरों में क्षैतिज रूप में (लेटी)। ऐसा इसलिए किया जाता है कि बिजलीघरों में ईंधन छड़ों को बदलना या उनका स्थानांतरण बिजलीघर की चाल हालत में किया जाता है ताकि बिजली उत्पादन बंद

न हो जबकि अनुसंधान रिएक्टर ''साइरस'' में ईंधन छड़ों को बदलने के लिए रिएक्टर को बंद करने में विशेष असुविधा नहीं होती। बिजलीघरों की शक्ति अधिक होने के कारण अधिक ईधन का व्यय होता है अतः ईंधन छड़ों को अपेक्षाकृत जल्दी बदलना पड़ता है। इस कार्य के लिए स्वचालित मशीनों का प्रयोग बिजलीघरों में किया जाता है। इसी प्रकार का एक और प्रमुख अंतर यह भी है कि साइरस में शीतलक को जब ताप विनिमयक से प्रवाहित करते हैं तो वहां सादे पानी को अधिक दबाव और तापमान वाली भाप में परिवर्तित करने के स्थान पर (जैसा कि बिजलीघरों में किया जाता है) सागर जल को उष्मा प्रदान कर उसे फिर सागर में छोड़ दिया जाता है। अन्य अन्तरों की चर्चा करना यहां सिद्धांत समझने की दृष्टि से आवश्यक नहीं है।

① केलेन्ड्रिया

② भारी पानी (मंदक एवं शीतलक)
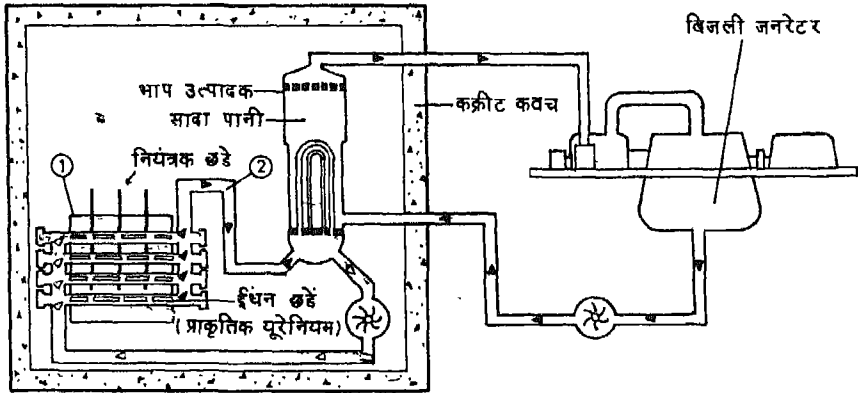
चित्र 19. राजस्थान परमाणु बिजलीघर की कार्यप्रणाली

परमाणु बिजलीघर प्रायः अधिक बिजली उत्पादन क्षमता वाले बनाना आर्थिक दृष्टि से आकर्षक होता है। उदाहरण के लिए कोटा एवं कलपक्कम में से प्रत्येक स्थान के बिजलीघर लगभग 470 मेगावाट क्षमता के हैं। ऐसे बिजलीघर प्रायः दो इकाइयों में बनाए जाते हैं ताकि सामान्य मरम्मत आदि के लिए बंद किए जाने की स्थिति में बिजली उत्पादन में एकाएक बहुत कमी न हो जाए। इसीलिए कोटा आदि के बिजलीघर दो रिएक्टर प्रति स्थान पर बनाए गए हैं जिनमें से प्रत्येक लगभग 235 मेगावाट बिजली का उत्पादन करता है। कई स्थानों जैसे तारापुर, कोटा एवं नरोरा में तो एक ही स्थान पर चार इकाइयों वाले परमाणु बिजलीघर बनाने की योजना है।

बिजली उत्पादन के साथ-साथ परमाणु बिजलीघरों के अनेकों और भी आकर्षक पहलू हैं। इनका सबसे महत्वपूर्ण आकर्षण तो यह है कि इनके लिए अपेक्षाकृत ईंधन की बहुत कम मात्रा आवश्यक होती है। उदाहरण के लिए यदि हम अपने किसी परमाणु बिजलीघर को लें तो उतनी ही क्षमता वाले कोयला चालित बिजलीघर के लिए हमें प्रतिदिन लगभग एक मालगाड़ी कोयला खानों से वहां तक पहुंचानी होगी और उनसे उत्पन्न अत्यधिक राख को भी कहीं और ले जाना होगा। इस प्रकार यातायात समस्या और उससे जुड़े ऊर्जा एवं अन्य व्यय करने होंगे। तेल के सीमित भण्डार और उसके अन्य आकर्षक उपयोगों को ध्यान में रखते हुए उसका व्यय इस कार्य के लिए करना अधिक उपयुक्त नहीं है। इसके विपरीत इन परमाणु बिजलीघरों की एक वर्ष की ईंधन मात्रा को एक ट्रक द्वारा लाया जा सकता है। देश के सीमित खनिज भण्डारों को ध्यान में रखते हुए परमाणु ऊर्जा का यह उपयोग और भी आकर्षक हो जाता है।

इनका दूसरा लाभ यह है कि बिजली उत्पादन के साथ साथ इन

रिएक्टरों में प्राकृतिक यूरेनियम ईंधन के अधिकांश भाग यूरेनियम-238 के कुछ भाग का परिवर्तन चित्र 11 में बताई गई न्यूट्रान अवशोषण प्रक्रिया द्वारा प्लूटोनियम-239 में होता रहता है जो विखंडनीय पदार्थ है और इसका उपयोग परमाणु बिजलीघरों में ईंधन के रूप में किया जा सकता है। इसके लिए जले हुए ईंधन को पुनर्संसाधन नामक रासायनिक प्रक्रिया द्वारा संसाधित कर उससे प्लूटोनियम-239 निकाला जाता है। इस प्रकार प्लूटोनियम-239 ईंधन हमें अतिरिक्त बोनस के रूप में प्राप्त होता है। यदि हम चाहें तो थोरियम की कुछ छड़ें डालकर ऊपर बताए चित्र में दी गई दूसरी न्यूट्रान अवशोषण प्रक्रिया द्वारा यूरेनियम-233नामक विखंडनीय पदार्थ प्राप्त कर सकते हैं जो आगे चलकर ईंधन के रूप में काम आ सकता है। इसके लिए भी थोरियम छड़ों का पुनर्संसाधन कर यूरेनियम-233 को अलग किया जा सकता है।

तीसरा आकर्षक पहलू तीव्र प्रजनन रिएक्टरों के 'बिजली उत्पादन में उपयोग' आरंभ होने पर हमारे सामने आएगा। जैसा कि बताया जा चुका है ऐसे रिएक्टर जितना ईंधन जलाते हैं उससे अधिक उत्पन्न कर सकते हैं। यह चमत्कारी प्रक्रिया और कहीं उपलब्ध नहीं है। कहते हैं कि ऊर्जा उत्पादन के अपारंपरिक स्रोतों जैसे सौर ऊर्जा, ज्वार-भाटा, वायु आदि के उपयोग द्वारा हम स्रोतों को कम नहीं करते परन्तु उनमें भी हम किसी में जितना व्यय करें उससे अधिक स्रोत का निर्माण नहीं कर पाते हैं। इनसे जुड़ी अन्य समस्याएं तो सर्वविदित हैं ही।

पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से भी परमाणु बिजलीघर अत्यन्त आकर्षक हैं। खनिज ईंधन के दहन की प्रक्रिया पर्यावरण से आक्सीजन गैस लेती है और कार्बन डाइ आक्साइड गैस उत्पन्न करती है। अतः विश्वव्यापी स्तर पर अनुमान है कि कार्बन डाइ आक्साइड की पर्यावरण में मात्रा निरंतर बढ़ती जाएगी। ऐसा होने की स्थिति में वातावरण का

तापमान बढ़ेगा और इसके अनेकों बुरे प्रभाव हो सकते हैं जैसे ध्रुवों की बर्फ पिघलने से निचले देशों का जलमग्न होना। इनके विपरीत परमाणु विखंडन प्रक्रिया में न तो प्राणवायु कही जाने वाली गैस आक्सीजन का व्यय होता है और न ही कार्बन डाइ आक्साइड गैस का उत्पादन।

दो और विशेषताएं परमाणु बिजलीघरों की हैं जो लाभदायक हैं। पहली तो यह कि ऐसे बिजलीघरों को कहीं पर बनाया जा सकता है। केवल जल स्रोत उपलब्ध होना चाहिए और दूसरा यह कि ऐसे बिजलीघर अनेकों रूप में बनाए गए हैं। उदाहरण के लिए सारणी 3 में बताया गया है कि कौन-कौन से भिन्न पदार्थों का उपयोग विभिन्न कार्यों के लिए किया जा सकता है। इससे हमें रिएक्टर प्रकार, ईंधन आदि को क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर उपलब्ध खनिजों आदि के आधार पर, बिजलीघर के प्रकार निश्चित करने के लिए अनेकों विकल्प उपलब्ध हैं। भारत के लिए इन्हीं विकल्पों में से सभी दृष्टि से लाभकारी विकल्प को कोटा स्थित बिजलीघर के प्रकार के रूप में चुना गया है।

परमाणु ऊर्जा पर आधारित बिजलीघर निर्माण का एक परोक्ष लाभ यह भी है कि इस उद्योग के लिए हमें अत्याधुनिक तकनीकी एवं पदार्थों आदि का उपयोग करना होता है। अतःइसमें लगे अनेकों निजी और सरकारी क्षेत्र के उद्योगों का भी विकास एवं आधुनिकीकरण होता है।

भारत की परमाणु बिजली उत्पादन योजना

इस देश की परमाणु बिजली उत्पादन योजना एक दीर्घकालीन योजना है जिसके तीन चरण होंगे। इनमें दो प्रमुख प्रकार के रिएक्टरों का प्रयोग किया जाएगा। पहला है प्राकृतिक यूरेनियम के ईंधन के रूप में और भारी पानी के मंदक के रूप में प्रयोग पर आधारित तापीय रिएक्टर

सारणी 3

परमाणु विखंडन से बिजली उत्पादन के लिए उपलब्ध विकल्प

रिएक्टर प्रकार	**ईंधन**	**मंदक**	**प्राथमिक शीतलक**	**द्वितीयक शीतलक**
तापीय	प्राकृतिक यूरेनियम	सादा पानी	सादा पानी	सादा पानी
तीव्र	परिष्कृत यूरेनियम	भारी पानी	भारी पानी	सागर का
तीव्र-प्रजनन	प्लूटोनियम-239	ग्रेफाइट	द्रव सोडियम	खारा पानी
तापीय-प्रजनन	यूरेनियम-233		कार्बन-डाइ	
	उपरोक्त के मिश्रण		आक्साइड गैस	
			कार्बनिक योगिक	

*

तथा दूसरा प्लूटोनियम-239 या यूरेनियम-233 और प्राकृतिक यूरेनियम के मिश्रण के ईंधन रूप में प्रयोग पर आधारित प्रजनन रिएक्टर। इन दोनों के बारे में आपको बताया जा चुका है अतः देखें कि यह विभिन्न चरण क्या होंगे।

पहला चरण : यह चरण लगभग सन् 2000 तक चलेगा और इसके अंतर्गत 235 मेगावाट तथा 500 मेगावाट प्रति रिएक्टर, बिजली उत्पादन क्षमता वाले अनेक रिएक्टरों के निर्माण की योजना है। आशा है सन् 2000 तक ऐसे सभी रिएक्टरों से कुल 10,000 मेगावाट (10,000,000 किलोवाट) बिजली का उत्पादन होने लगेगा। प्रत्येक स्थान पर कम से कम दो रिएक्टरों के एक साथ निर्माण की योजना हैं। अभी तक ऐसे ही 235 मेगावाट क्षमता की दो इकाइयों वाले रिएक्टर राजस्थान में कोटा के निकट रावतभाटा में, तमिलनाडु में मद्रास के

* इनके सभी संयोग संभव नही हैं, जैसे प्राकृतिक यूरेनियम ईंधन के साथ सादा पानी का मंदक के रूप में उपयोग।

निकट कलपक्कम में बनाए जा चुके हैं और कार्य कर रहे हैं। ऐसे ही दो रिएक्टर महाराष्ट्र में बम्बई के पास तारापुर में भी कार्य कर रहे हैं। तारापुर वाले रिएक्टर ईंधन और मंदक के प्रकारों में भिन्नता के होते हुए भी अन्य बनाए गए रिएक्टरों की ही भांति तापीय रिएक्टर हैं। यह भारत में बनाया गया प्रथम परमाणु बिजलीघर था जिसका निर्माण
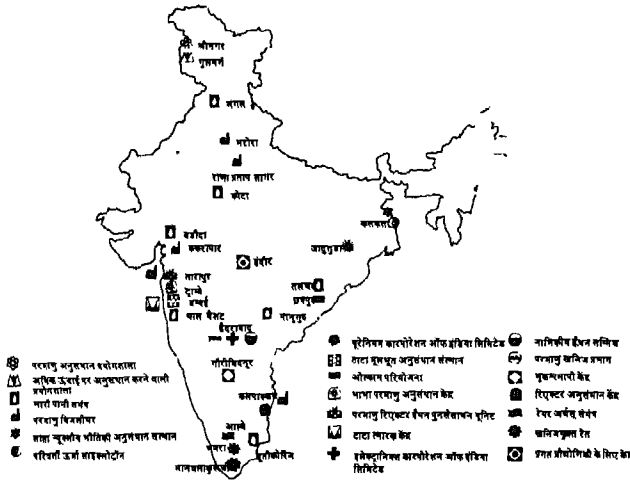
चित्र 20. भारत के परमाणु ऊर्जा संस्थान

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की एक कम्पनी के सहयोग से किया गया था। इसके निर्माण का उद्देश्य बिजली प्राप्त करना और भारतीय वैज्ञानिकों और इजीनियरों को संचालन अनुभव प्राप्त कराना भी था। प्रकार में भिन्नता का कारण भी उस समय सबसे आकर्षक शर्तों पर और प्रमाणित तकनीकी पर ऐसे रिएक्टरों का आधारित होना था।

इस समय 235 मेगावाट की 2 इकाइयों वाले बिजलीघरों का

निर्माण उत्तर प्रदेश में अलीगढ़ के निकट नरोरा में तथा गुजरात के सूरत शहर के निकट काकरापार में चल रहा है। ऐसी ही 2 इकाइयों वाले बिजलीघर का निर्माण कर्नाटक में काइगा नामक स्थान पर शीघ्र ही आरंभ होगा। तारापुर, कोटा एवं नरोरा में से प्रत्येक स्थान पर दो और रिएक्टरों के बनाने की योजना है। अन्य स्थानों का चयन अभी अंतिम रूप से नहीं हुआ है परन्तु शीघ्र ही होने की आशा है। इस प्रकार सन् 2000 तक लगभग 10000 मेगावाट क्षमता के बिजलीघरों के निर्माण के साथ ही परमाणु ऊर्जा द्वारा बिजली उत्पादन के प्रथम चरण के पूर्ण होने की आशा है। इन सभी के लिए आवश्यक ईंधन (प्राकृतिक यूरेनियम) देश में उपलब्ध है और भारी पानी के लिए अनेकों संयंत्र लगाए जा चुके हैं और लगाए जा रहे हैं। ऐसे संयंत्र कोटा (राजस्थान), बड़ोदरा (गुजरात), तालचेर (उड़ीसा) और तूतीकोरीन (तमिलनाडु) और नंगल (पंजाब) में कार्य कर रहे हैं तथा थल (महाराष्ट्र) और मनगुरु (आंध्र प्रदेश) में निर्माणाधीन है। ईंधन की छड़ों का उत्पादन हैदराबाद के नाभिकीय ईंधन समिश्र कारखाने में और इलेक्ट्रानिक उपकरणों का निर्माण हैदराबाद में ही स्थित इलेक्ट्रानिक्स कार्पोरेशन आफ इंडिया में होगा। इनके अलावा अनेकों सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र के कारखानों में भी अनेकों महत्वपूर्ण संयंत्र बनेंगे। इस प्रकार बिजलीघरों के निर्माण के साथ ही देश के अनेकों क्षेत्रों और संस्थानों का भी विकास विज्ञान के आधुनिक क्षेत्रों में हो सकेगा। इन सभी परमाणु बिजलीघरों से बहुत बड़ी मात्रा में बिजली तो मिलेगी ही परन्तु साथ ही दूसरे चरण के बिजलीघरों के निर्माण के लिए आवश्यक ईंधन प्लूटोनियम-239 भी अतिरिक्त लाभ के रूप में प्राप्त हो सकेगा। इसके निर्माण की प्रक्रिया तो आपको बताई जा चुकी है। जले हुए ईंधन से प्लूटोनियम-239 निकालने के लिए आवश्यक संयंत्र जिन्हें ईंधन पुनर्संसाधन प्लांट कहते हैं बम्बई

और तारापुर में कार्य कर रहे हैं और कलपक्कम में निर्माणाधीन है

दूसरा चरण : परमाणु बिजली उत्पादन योजना का दूसरा चरण लगभग सन् 2000 से आरंभ होगा। इसमें ऐसे प्रजनन रिएक्टरों का निर्माण किया जाएगा जो प्लूटोनियम-239 और प्राकृतिक यूरेनियम के मिश्रण का उपयोग ईंधन के रूप में करेंगे और बिजली उत्पादन के साथ ही साथ जितना ईंधन यह जलाएंगे उससे अधिक ईंधन का निर्माण प्लूटोनियम-239 या यूरेनियम-233 के रूप में करेंगे। यद्यपि अभी तक खोजे गए प्राकृतिक यूरेनियम के भण्डार इस देश में सीमित हैं परन्तु थोरियम के भण्डार मोनाज़ाइट रेत के रूप में अत्यधिक हैं। इसी थोरियम को प्रजनन रिएक्टरों में यूरेनियम-233 में बदला जा सकेगा जो कि तीसरे चरण के कार्यक्रम के अंतर्गत बनने वाले बिजलीघरों में ईंधन के रूप में काम में लाया जा सकेगा।

इन प्रजनन रिएक्टरों के निर्माण और संचालन में आ सकने वाली कठिनाइयों के अध्ययन और उनका कुछ अनुभव प्राप्त करने के उद्देश्य से कलपक्कम में एक तीव्र प्रजनन परीक्षण रिएक्टर का निर्माण पूरा हो गया है और इसने अक्तूबर 1985 से कार्य करना आरंभ कर दिया है। अभी तो यह प्रजनन रिएक्टर के संचालन से संबंधित अनुभव प्राप्त करने में सहायक होगा पर कुछ ही वर्षों में यह लगभग 15 मेगावाट बिजली का उत्पादन भी करने लगेगा। इसके अलावा प्रजनन बिजलीघरों के डिज़ायन के लिए आवश्यक आंकड़ों का पता लगाने के लिए दो प्रायोगिक छोटे रिएक्टर पूर्णिमा-1 और पूर्णिमा-2 बम्बई में बनाए जा चुके हैं और कामिनी नामक सुविधा का निर्माण कलपक्कम में हो रहा है। इन सभी से प्राप्त अनुभवों के आधार पर एक प्रजनन बिजलीघर का निर्माण शायद प्रथम चरण के समाप्त होने से पहले ही

शुरू हो सकेगा जो कलपक्कम के तीव्र प्रजनन परीक्षण रिएक्टर की अपेक्षा बहुत अधिक बिजली का उत्पादन कर सकेगा। अभी यह कहना कठिन है कि दूसरे चरण में कितने, कहां और कब तक परमाणु बिजलीघर बनेंगे परन्तु आशा है कि अगली शताब्दी के पहले दशक में ऐसा पहला बिजलीघर बनाना संभव हो सकेगा।

तीसरा चरण : यह चरण अभी परिकल्पना स्थिति में है। इसमें थोरियम से प्रजनन और तापीय बिजलीघरों के माध्यम से प्राप्त यूरेनियम-233 ईंधन के प्रयोग से तापीय या तापीय-प्रजनन प्रकार के बिजलीघर बनाना संभव हो सकेगा। यह निश्चित है कि दूसरे चरण के सफलता पूर्वक संपन्न होने से देश ईंधन के मामले में स्वावलंबी हो सकेगा और फिर आर्थिक साधनों और बिजली उत्पादन के अन्य तरीकों में उस समय आने वाली लागत आदि के आधार पर जितना आवश्यक हुआ उतनी बड़ी संख्या में परमाणु बिजलीघर बनाना संभव हो सकेगा। प्रथम चरण के सफल होने पर आगे के लिए मार्ग आसान हो जाएगा क्योंकि इस प्रक्रिया में औद्योगिक विकास भी इतना अधिक हो चुकेगा कि आगे के कार्यक्रम को बिना किसी विदेशी निर्भरता के पूरा करना संभव हो सकेगा। यद्यपि परमाणु ऊर्जा द्वारा बिजली उत्पादन के सभी पहलुओं के डिजायन, निर्माण और संचालन में पूर्ण आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली गई है परन्तु कुछ पदार्थों एवं उपकरणों को अभी भी विदेशों से मंगाना होता है। शताब्दी के अंत तक यह सभी देश में ही उपलब्ध हो सकेंगे।

यह आवश्यक नहीं है कि विभिन्न चरण एक दूसरे से बिलकुल अलग हों। उदाहरण के लिए यदि सन् 2000 में आवश्यक पाया गया कि बड़े पैमाने पर प्रजनन बिजलीघर बनाने से पहले कुछ और तापीय बिजलीघर बनाए जाएं तो कार्यक्रम के पुनरावलोकन के आधार पर

कार्यक्रम बदले जा सकते हैं, पर दिशा इसी कार्यक्रम के आधार पर चलेगी। देश के दो प्रमुख परमाणु ऊर्जा अनुसंधान केंद्रों (बम्बई और कलपक्कम) में हो रहे अनुसंधान और विकास तथा विदेशों में हो रहे अनुसंधान की जानकारी तथा बिजली उत्पादन के अन्य तरीकों के विकास की मिजीजुली जानकारी और आंकड़े ही कार्यक्रमों को अंतिम रूप दे सकेंगे। यदि अगली शताब्दी के आरंभ तक संलयन प्रक्रिया का नियंत्रित और आर्थिक दृष्टि से आकर्षक उपयोग संभव हो सका, जिसकी आशा है, तो अगली शताब्दी के मध्य तक भारत में ही नहीं बल्कि सारे विश्व में बिजली उत्पादन में उसका सबसे महत्वपूर्ण योगदान होने लगेगा। विज्ञान की अनिश्चितताएं और असीमित संभावनाएं ही उसका सबसे रोचक और आकर्षक पहलू है जो वैज्ञानिकों के निरंतर विकास में लगे रहने का प्रेरणा स्रोत भी है।

परमाणु ऊर्जा के विभिन्न पहलुओं पर हो रहे कार्य आज देश के विभिन्न क्षेत्रों में फैले हैं। इनकी एक झलक आपको चित्र 20 से मिलेगी। भविष्य में जो क्षेत्र बचे भी हैं उनमें भी इनका प्रसार होगा। इनका योगदान जनसामान्य के जीवन को और अधिक लाभान्वित करने लगेगा।

परमाणु रिएक्टरों के अन्य उपयोग

परमाणु रिएक्टरों का उपयोग केवल बिजलीघरों के निर्माण अनुसंधान कार्यों और रेडियो आइसोटोप उत्पादन तक ही सीमित नहीं हैं। इनसे प्राप्त होने वाली सघन रूप में ऊर्जा के कई अन्य प्रयोग भी विकसित देशों में किए गए हैं इनमें सबसे महत्वपूर्ण हैं परमाणु ऊर्जा चालित पानी के जहाज़ और पनडुब्बियाँ। इन दोनों ही में ऊर्जा स्रोत के रूप में परमाणु रिएक्टरों का प्रयोग किया गया है। अभी तक इन्हें नौसेना

के लड़ाकू जहाज़ों में प्रयोग किया गया है क्योंकि उनमें और पनडुब्बियों में ही इनका उपयोग सबसे आकर्षक है। इस स्रोत का सबसे बड़ा आकर्षण यह है कि इसमें ईंधन को जल्दी बदलने की आवश्यकता नहीं होती और जब होती भी है तो अन्य ईंधनों की अपेक्षा बहुत कम मात्रा में। इसीलिए ऐसे जहाज और पनडुब्बियाँ महीनों तक गहरे सागरों में बिना किसी तट को छुए (ईंधन के लिए) रह सकते हैं। ध्रुव क्षेत्रों में बर्फ तोड़ने वाले जहाज़ों के लिए भी ऐसे रिएक्टर आकर्षक होते हैं क्योंकि ऐसे जहाज़ों को बहुत शक्तिशाली बनाना पड़ता है और इनकी यात्राएं लम्बे समय की होती हैं। ध्रुव क्षेत्रों की सर्दी से बचने के लिए काफी ऊर्जा की आवश्यकता, ताप के रूप में भी होती है।

ऐसे रिएक्टर विशेष संरचना के होते हैं। यहां प्रमुख उद्देश्य होता है भार को कम रखना, अधिक समय तक चलने वाले ईंधन का प्रयोग, (प्रायः परिष्कृत यूरेनियम या प्लूटोनियम-239) छोटा आकार आदि। भारतवर्ष के सुदूर क्षेत्रों में बिजली पहुंचाने में परमाणु बिजलीघर विशेष रूप से उपयोगी और आर्थिक दृष्टि से आकर्षक हो सकते हैं। उत्तर पूर्व के पहाड़ी क्षेत्रों में घरों को गर्म रखने और बिजली पहुंचाने के दोनों कार्य इनके द्वारा एक साथ पूरे किए जा सकते हैं।

□□□

7

परमाणु ऊर्जा के अन्य उपयोग

परमाणु ऊर्जा के अधिकांश अन्य प्रयोग रेडियो आइसोटोपों के उपयोगों पर आधारित हैं। इन प्रयोगों में काम आने वाले अधिकांश रेडियो आइसोटोप परमाणु रिएक्टरों द्वारा बनाए जाते हैं। इस कार्य के लिए जिन रिएक्टरों का प्रयोग इस देश में किया जाता है वह हैं ''अप्सरा'' और ''साइरस''। यह दोनों ही अनुसंधान रिएक्टर हैं और बम्बई के भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र में स्थित हैं। इसी केंद्र में हाल ही में (अगस्त 1985) कार्यारंभ करने वाले ''ध्रुव'' रिएक्टर का प्रयोग निकट भविष्य में रेडियो आइसोटोप के और बड़े पैमाने पर उत्पादन करने के लिए होने लगेगा। ''अप्सरा'' एक मेगावाट ताप शक्ति वाला रिएक्टर है और ''साइरस'' 40 मेगावाट शक्ति वाला जबकि नए रिएक्टर ''ध्रुव'' की शक्ति 100 मेगावाट है। अतः इसमें न्यूट्रानों की उपलब्धि और मात्रा आदि कहीं अधिक होगी और रेडियो आइसोटोपों का उत्पादन और बड़े पैमाने पर हो सकेगा। ''ध्रुव'' रिएक्टर संरचना में ''साइरस'' रिएक्टर जैसा ही है केवल शक्ति और अन्य सुविधाओं में भिन्न है।

परमाणु ऊर्जा विकास की एक और देन ऐसी मशीनें हैं जिन्हें "एक्सीलरेटर" या "त्वरक" कहते हैं। इनकी सहायता से इलेक्ट्रान एवं अन्य चार्ज या आवेश वाले कणिकीय पदार्थों को अत्यधिक ऊर्जा एवं गति प्रदान की जाती है। इस अत्यधिक ऊर्जा के कारण कणिकीय पदार्थ नाभिकीय प्रक्रिया द्वारा रेडियो आइसोटोप का निर्माण कर सकते हैं। प्राय: इनका प्रयोग उन रेडियोआइसोटोपों के निर्माण के लिए किया जाता है जो रिएक्टरों में न्यूट्रान अवशोषण से नहीं बनाए जा सकते। इन त्वरकों का सीधा प्रयोग केंसर चिकित्सा में भी किया जाता है जहां तीव्र गति और अधिक ऊर्जा वाले कणिकीय पदार्थों का उपयोग केंसर रोग से प्रभावित कोशिकाओं को जलाने में किया जाता है। इन कणिकीय पदार्थों से अनेकों प्रकार के विकिरण विभिन्न नाभिकीय प्रक्रियाओं द्वारा प्राप्त किए जा सकते हैं। ऐसा ही एक संयंत्र कलकत्ता में "वेरिएबिल एनर्जी साइक्लोट्रोन" नाम का बनाया गया है इसका प्रयोग भी विशिष्ट प्रकार के रेडियो आइसोटोपों के निर्माण के लिए किया जाएगा। देश के कई अस्पतालों में "त्वरकों" का प्रयोग चिकित्सा में किया जा रहा है। ये "त्वरक" विदेशों में निर्मित हैं।

इससे पहले कि परमाणु ऊर्जा के अन्य उपयोगों की चर्चा कुछ विस्तार में करें हमें कुछ प्रश्नों के उत्तर पाने होंगे। यह हैं– रेडियोआइसोटोप क्या हैं? इनका निर्माण कैसे होता है? इनके विशेष गुण क्या हैं? तो आइए पहले इन तीन प्रमुख प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करें।

□□□

8

रेडियोआइसोटोप

आपको बताया गया था कि किसी तत्व की सबसे छोटी इकाई परमाणु के दो प्रमुख भाग होते हैं, नाभिक और उससे चारों ओर परिक्रमा कर रहे इलेक्ट्रान। नाभिक में दो प्रकार के कण होते हैं प्रोटान और न्यूट्रान। नाभिक में इन दोनों कणों की कुल संख्या और उनका आपसी अनुपात यह निश्चित करता है कि परमाणु अस्थिर होगा या स्थिर। किसी तत्व विशेष के परमाणु हालांकि हमेशा निश्चित संख्या में प्रोटान और इलेक्ट्रान वाले होते हैं परन्तु इनमें न्यूट्रानों की संख्या भिन्न हो सकती है। केवल न्यूट्रान की संख्या में भिन्नता वाले परमाणुओं को हम उस तत्व के आइसोटोप कहते हैं। इनमें से कुछ स्थिर या स्थाई नाभिक वाले हो सकते हैं जिन्हें स्टेबिल आइसोटोप या स्थाई आइसोटोप कहते हैं और शेष अस्थिर या अस्थाई। इन्हें रेडियोआइसोटोप कहते हैं। अस्थिरता निम्नलिखित कारणों से हो सकती है। प्रायः न्यूट्रानों की नाभिक में संख्या अधिक होने पर (प्राकृतिक रूप में या जानबूझ कर करने से) नाभिक और परमाणु रेडियोएक्टिव हो जाते हैं और रेडियोआइसोटोप कहलाते हैं। कुछ भारी तत्वों के सभी आइसोटोप, रेडियोआइसोटोप होते हैं। इन्हें रेडियोआइसोटोप इसलिए कहते हैं

क्योंकि यह अपनी अस्थिरता दूर करने या कम करने के लिए, नाभिक से कणिकीय पदार्थों का उत्सर्जन करते रहते हैं। इस विकिरण या उत्सर्जन को उस परमाणु या आइसोटोप की रेडियो सक्रियता कहते हैं और पदार्थ को रेडियोआइसोटोप।

अस्थिरता कम या दूर करने के कई तरीके संभव हैं। इनके उद्देश्य प्रायः (1) नाभिक में न्यूट्रान और प्रोटान के अनुपात को कम करना या (2) नाभिक के कुल कणिकीय पदार्थों (न्यूट्रान + प्रोटान) की संख्या कम करना या दोनों होते हैं। ऐसा जिन क्रियाओं से संभव है और जो वास्तव में पाई जाती हैं वे निम्न हैं। (चित्र 21))

(1) एक न्यूट्रान, एक प्रोटान + एक इलेक्ट्रान में बदल जाए और इलेक्ट्रान बाहर निकल जाए तो इस प्रक्रिया द्वारा नाभिक में न्यूट्रान की संख्या एक कम और प्रोटान की एक अधिक हो जाती है और नाभिक अधिक स्थाई हो जाता है। इस प्रक्रिया में जो इलेक्ट्रान नाभिक से निकलता है उसे बीटा कण या इनके पुंज को बीटा किरणें कहते हैं।

(2) नाभिक से एक साथ दो न्यूट्रान एवं दो प्रोटोनें का मिला जुला छोटा नाभिक (जो हीलियम तत्व के नाभिक के अनुरूप होता है) बाहर निकल जाए। इस प्रकार नाभिक में कुल कणिकीय पदार्थों की संख्या 4 कम हो जाती है। इस प्रकार निकले हुए कणिकीय पदार्थ को एल्फा कण कहते हैं और इनके पुंज को एल्फा किरणें। ऐसा प्रायः भारी नाभिक वाले तत्वों जैसे यूरेनियम, रेडियम, थोरियम आदि में होता है।

(3) यदि उपरोक्त या किसी और प्रक्रिया के कारण नाभिक की कुल ऊर्जा अधिक हो तो उसे हम उत्तेजित नाभिक कहते हैं। इस अतिरिक्त ऊर्जा को नाभिक प्रकाश किरणों जैसे विकिरण
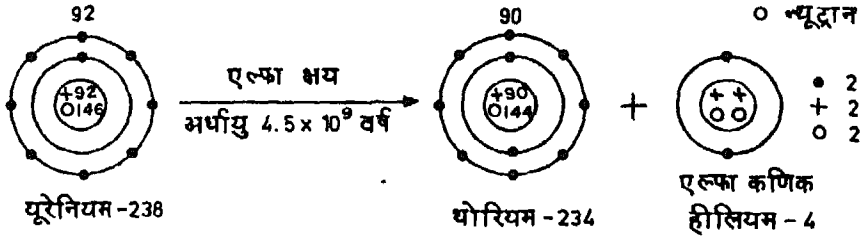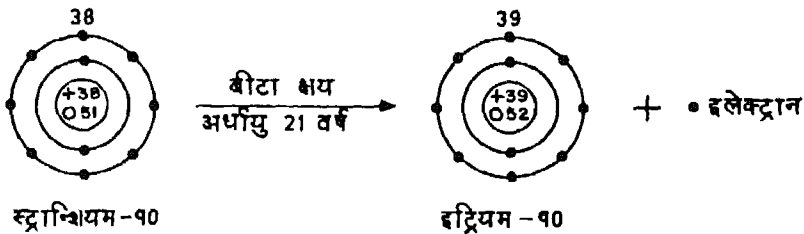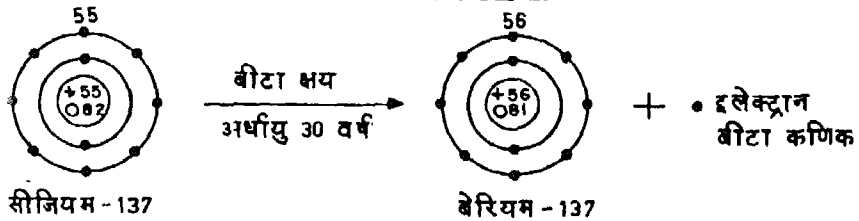
गामा विकिरण प्राय: बीटा क्षय के साथ निकलते है।

चित्र 21. एल्फा, बीटा और गामा विकिरण

निकाल कर स्थिरता प्राप्त करता है। इस विकिरण को हम गामा विकिरण या गामा किरणें कहते हैं। यह प्रकाश जैसी ही होती हैं परन्तु ऊर्जा में प्रायः बहुत अधिक। यह प्रंक्रिया ऊपर बताई (1) और (2) प्रक्रियाओं के साथ पाई जाती है। (1) और (2) प्रक्रिया के बाद परमाणु दूसरे तत्व में परिवर्तित हो जाता है क्योंकि उसके नाभिक की प्रोटान संख्या बदल जाती है परन्तु (3) में वह उसी तत्व का परमाणु रहता है।

इनके अतिरिक्त भी कई और संभावनाएं हैं परन्तु हम केवल इन्हीं तीन तक अपने को सीमित रखेंगे। इन तीनों किरणों एल्फा, बीटा एवं गामा के गुणों की चर्चा उनके उपयोग समझने से पहले करेंगे परन्तु पहले अगले प्रश्न का उत्तर प्राप्त करें।

रेडियोआइसोटोप का निर्माण

रेडियोआइसोटोप किसी तत्व के वह रूप हैं जिनके नाभिक अस्थिर हों और पिछले खण्ड में बताई प्रक्रियाओं में से एक या अधिक तरीकों से स्थिरता की ओर अग्रसर होने के लिए विकरण या कण निकालें। इस अस्थिरता को उत्पन्न करने का सबसे सरल और व्यापक रूप में प्रयोग में लाया जाने वाला तरीका स्थाई आइसोटोप को न्यूट्रानों के क्षेत्र में रखना है ताकि उनके नाभिक एक या अधिक न्यूट्रानों का अवशोषण कर उस तत्व के रेडियोआइसोटोप में बदल सकें। यदि हम कोई आइसोटोप 'X' लें जिसका परमाणु क्रमांक Z और भार क्रमांक A हो तो एक न्यूट्रान के अवशोषण से उसमें निम्न परिवर्तन होगा

$$_{Z}X^{A} + \text{न्यूट्रान} \rightarrow {}_{Z}X^{A+1*}$$
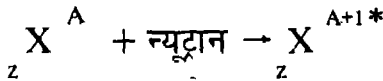
अब यदि यह परिवर्तित नाभिक एक और न्यूट्रान का अवशोषण कर सके तो निम्न परिवर्तन होगा

$${}_{Z}X^{A+1} + \text{न्यूट्रान} \rightarrow {}_{Z}X^{A+2\,*}$$
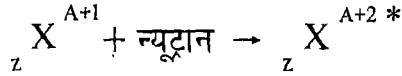
और इसी प्रकार न्यूट्रान अवशोषण क्षमता के अनुसार यह क्रम आगे भी चल सकता है। न्यूट्रान अवशोषण से बने आइसोटोप ${}_{Z}X^{A+1*}$, ${}_{Z}X^{A+2*}$ आदि अस्थिर या रेडियोएक्टिव होते हैं और विभिन्न प्रकार की रेडियोएक्टिविटी दर्शाते हैं। इस अस्थिर अवस्था को हमने यहां चिन्ह (*) से दर्शाया है।

इसके अतिरिक्त अनेकों दूसरे तरीकों से भी रेडियोआइसोटोप बनाए जा सकते हैं और विभिन्न प्रकार के कणिकीय पदार्थों जैसे एल्फा, प्रोटान, गामा विकिरणों आदि का प्रयोग भी किया जाता है। इन सभी को नाभिकीय अभिक्रियाएं या न्यूक्लियर रिएक्शन कहते हैं। कौन सी प्रक्रिया संभव है और अपनाई जाए इसके निर्धारण का महत्वपूर्ण मापदण्ड उस प्रक्रिया विशेष और आइसोटोप विशेष की अवशोषण क्षमता है जिसे प्रक्रिया क्रास-सेक्शन कहते हैं। इस संख्या का मान उस प्रक्रिया के होने की संभावना (Probability) बताता है। और भी अनेकों आंकड़े जानना आवश्यक होता है जैसे प्रति इकाई क्षेत्रफल में न्यूट्रान या अन्य कणों की संख्या (Particle flux) आइसोटोप को इनके बीच रखने का समय आदि। संक्षेप में, यदि हम किसी आइसोटोप को परमाणु रिएक्टर के उस भाग में रखें जहां न्यूट्रान होते हैं तो उसके कुछ परमाणु (प्रक्रिया के आंकड़ों के अनुसार) रेडियोआइसोटोप में बदल जाते हैं। उदाहरण के लिए यदि हम सामान्य कोबाल्ट तत्व को लें तो उसमें

पाया जाने वाला स्थाई कोबाल्ट-59 रिएक्टर में डालने से कोबाल्ट-60 बन जाता है जो रेडियोएक्टिव है। इसके अनेकों प्रयोग किए जाते हैं। विभिन्न प्रकार की अन्य मशीनों में, जिन्हें कणिकीय पदार्थ त्वरक या पार्टिकल एक्सिलरेटर कहते हैं, उनका भी प्रयोग रेडियोएक्टिव पदार्थों के उत्पादन में किया जाता है।

अब यह जान लेने के बाद कि रेडियोएक्टिव पदार्थ कैसे बनाए जाते हैं और वह किन किन प्रकार के विकिरणों के स्रोत होते हैं इनके उपयोगों की चर्चा से पहले यह जानना लाभकारी होगा कि इनके कौन से प्रमुख गुण हैं जिनका प्रयोग इनके उपयोगों में किया जाता है। इसके लिए पहले एल्फा, बीटा और गामा किरणों के कुछ गुणों की आपस में तुलना करें।

1. एल्फा किरणें : हीलियम तत्व के नाभिक होने के कारण अन्य दोनों प्रकार की किरणों से भारी होती हैं। यह अपनी ऊर्जा वायु या किसी अन्य पदार्थ से गुजरते समय तेज़ी से खोती हैं। इन्हें रोकना बहुत आसान होता है। कागज की एक परत उन्हें रोकने के लिए काफी है। परन्तु यह अपने मार्ग में बहुत बड़ी मात्रा में आयन (+ और −) उत्पन्न करती जाती हैं। शरीर के अन्दर पहुंच जाने पर अधिक हानिकारक हो सकती हैं और निकटवर्ती सेलों या कोशिकाओं को मारने में बहुत सक्षम होती हैं।

2. बीटा किरणें : यह एल्फा की तुलना में अधिक पदार्थभेदी होती हैं। अपने मार्ग में उतना अधिक आयनीकरण उत्पन्न नहीं करती जितना एल्फा किरणें करती हैं। धातु की कुछ मिलीमीटर मोटी परत इन्हें रोकने के लिए काफी होती है। शरीर में जिस स्थान पर ऐसे रेडियोआइसोटोप

पहुंच जाएं जो बीटा विकिरण देते हैं तो वहां के निकटवर्ती सेलों को यह जला सकते हैं और उनें अनुवांशिक परिवर्तन भी उत्पन्न कर सकते हैं।

3. गामा किरणें : यह सबसे अधिक पदार्थभेदी होती हैं और ऊर्जानुसार लोहे या सीसे की अधिकाधिक मोटी परतों द्वारा इनकी तीव्रता को कम किया जा सकता है। सिद्धांत रूप में इन्हें पूरी तरह अवशोषित करना संभव नहीं है क्योंकि इनकी तीव्रता निम्न समीकरण के अनुसार कम होती है।

$$\text{तीव्रता (क)} = \text{तीव्रता (0)}.\ e^{-\mu(\text{क})}$$

इस समीकरण में तीव्रता (0) स्रोत की तीव्रता, तीव्रता (क) 'क' मोटाई के दूसरी ओर मिलने वाली तीव्रता और μ उस धातु का क्षीणन (Attenuation) गुणांक है, e को एक्सपोनेन्शल कहते हैं (मान ~ 2.303). एक्सपोनेन्टी संबंध से जाहिर है कि असीमित मोटाई ही तीव्रता (क) का मान शून्य कर सकती है। इसीलिए गामा स्रोतों के लिए एक विशिष्ट मोटाई (जो हर धातु और गामा ऊर्जा के लिए भिन्न होती है) जिसे अर्धमान परत या हाफ वेल्यू लेथर कहते हैं, दी जाती है। यह वह मोटाई है जो तीव्रता को आधा करती है। इसकी दो गुनी मोटाई $\frac{1}{2} \times \frac{1}{2} = \frac{1}{4}$ अर्थात् तीव्रता को एक चौथाई करेगी। तीन गुनी मोटाई $\frac{1}{2} \times \frac{1}{2} \times \frac{1}{2} = \frac{1}{8}$ अर्थात् आठ गुना कम करेगी आदि। गामा विकिरण सबसे अधिक पदार्थभेदी होने के कारण सबसे व्यापक उपयोगों में आते हैं। यह भी सेलों को मारने में सक्षम होते हैं और शरीर के बाहर से ही गामा स्रोतों द्वारा शरीर के अन्दर के सेलों को मारा जा सकता है।

प्रत्येक रेडियोआइसोटोप एक विशिष्ट प्रकार के विकिरण का स्रोत होता है और विकिरण और रासायनिक गुणों के आधार पर इनका प्रयोग

निश्चित किया जाता है। प्रमुख विकिरण गुण निम्न हैं। (कृपया परिशिष्ट 2 भी देखिए)।

प्रकार : एल्फा, बीटा या गामा विकिरण

ऊर्जा : निकलने वाले विकिरणों की ऊर्जा

अर्धायु : जिस रेडियोआइसोटोप की अर्धायु अधिक होती है उसका उपयोग अधिक समय तक किया जा सकता है। रेडियोआइसोटोप की विकिरण दर का अर्धायु से विपरीत रिश्ता होता है अर्थात् जितनी ही अर्धायु अधिक होगी उतना ही विकिरण दर कम (निश्चित रेडियोआइसोटोप भार या मात्रा के लिए) होगी।

कई प्रयोगों में रेडियोआइसोटोपों का उपयोग किसी पदार्थ के शरीर में स्थानान्तरण की गति आदि के पता लगाने के लिए किया जाता है। ऐसे उपयोगों के लिए रसायनिक रूप में उसे वैसा ही होना चाहिए जैसा वह पदार्थ जिसका स्थानान्तरण पता लगाना है।

विभिन्न उपयोगों में रेडियोआइसोटोपों के विकिरणों के पदार्थभेदी गुण, उनसे निकलने वाली ताप, ऊर्जा या उनके प्रकीर्णन गुणों का लाभ उठाया जाता है। अतः अब ऐसे कुछ प्रयोगों के बारे में चर्चा करेंगे जो काफी व्यापक हो गए हैं।

□□□

9

रेडियोआइसोटोप का चिकित्सा में उपयोग

रेडियोआइसोटोप और विकिरण स्रोतों का इस्तेमाल अनेक रोगों का पता लगाने और कुछ रोगों के इलाज में किया जाता है। इन कामों में विकिरण के दो प्रमुख गुणों का उपयोग किया जाता है। (1) विकिरण द्वारा कोशिकाओं (सेलों) को जलाना और (2) विकिरण का पदार्थभेदी गुण, जिसके कारण यदि रेडियोआइसोटोप को बहुत कम मात्रा में शरीर के उस अंग में पहुंचाया जा सके जिसके कार्य करने का अध्ययन करना है तो बिना चीरफाड़ के बाहर से ही एक्स-रे चित्र की भांति की उस अंग का चित्र लिया जा सकता है। कुछ उपयोगों में विकिरण मापक यंत्रों की सहायता से रेडियोआइसोटोप के शरीर के विभिन्न अंगों में वितरण को भी मापा जा सकता है। इस प्रकार रोगों का निदान किया जाता है। कुछ चिकित्सा संयंत्रों में विकिरण द्वारा मिलने वाले ताप से बिजली प्राप्त की जाती है जो शरीर के अंदर स्थापित किए गए संयंत्रों को लम्बे समय तक बिना बैटरी या अन्य ऊर्जा स्रोत के चला सकती है। इसका उदाहरण "पेस मेकर" नामक संयंत्र है जिसका उपयोग हृदय की धड़कन की आवृति को नियंत्रित करने में किया जाता है।

ऊपर बताए गए गुणों के आधार पर किए जाने वाले उपयोगों की कुछ जानकारी हम यहां देंगे। चिकित्सा के उन तरीकों को जिनमें विकिरण स्रोतों और रेडियोआइसोटोपों का प्रयोग होता है न्यूक्लियर मेडीसिन या नाभिकीय चिकित्सा प्रणाली कहते हैं और आज देश के अनेकों बड़े अस्पतालों में नाभिकीय चिकित्सा केन्द्र कार्य कर रहे हैं।

कैंसर चिकित्सा : कैंसर रोग कई प्रकार के होते हैं जैसे रक्त का कैंसर जिसे ल्यूकेमियां कहते हैं। अस्थि-मज्जा या बोन-मैरो का कैंसर, ग्रंथि रूपी या ट्यूमर के रूप में कैंसर आदि। महिलाओं में स्तन कैंसर, गर्भाशय में कैंसर आदि अधिक पाए जाते हैं। रक्त कैंसर में सफेद कोशिकाएं रक्त में बहुत तेज़ी से बढ़ने लगती हैं जबकि शरीर के विशिष्ट भागों में होने वाले कैंसर में जहां घाव या गांठ होती है उसकी कोशिकाओं या सेलों में बहुत तेज़ी से वृद्धि होने लगती है और गांठ का आकार बढ़ने लगता है। यदि समय रहते इलाज न किया जाए तो कैंसर कोशिकाएं जल्दी ही शरीर के दूसरे भागों में भी फैल सकती हैं। इसे रोग की मेटास्टेसिस आरंभ होना कहते हैं। ऐसा होने पर इलाज से कैंसर से पूरी तरह मुक्ति कठिन हो जाती है। इस स्थिति में आने पर इलाज आयु को कुछ बढ़ा तो सकता है पर रोग को पूरी तरह ठीक करना सदैव संभव नहीं होता है। परन्तु आरंभिक अवस्था में जब कैंसर शरीर के किसी विशेष अंग तक ही सीमित हो तो इसका पूरी तरह इलाज अधिकांश प्रकार के कैंसर रोगों में संभव है।

सीमित अंग में कैंसर का पता लगाने पर शल्य चिकित्सा द्वारा अंग को निकालने की अपेक्षा, उस भाग को विकिरण से जला देना प्रायः अधिक उपयुक्त होता है क्योंकि शल्य चिकित्सा में कैंसर कोशिकाओं के अन्य अंगों में पहुंचने की संभावना रहती है। यदि शल्य चिकित्सा की भी जाती है तो उसके बाद उस अंग के निकटवर्ती अंगों, जहां उसके फैलने

की संभावना हो, विकिरण द्वारा जलाना प्रायः काम में लाया जाता है। विकिरण द्वारा कोशिकाओं को जलाने में विकिरण के कोशिकाओं पर पड़ने पर उसके पदार्थभेदी गुण एवं इस प्रक्रिया में उत्पन्न ताप दोनों ही सहायक होते हैं।

विकिरण उपचार या रेडिएशन थेरापी में रेडियोआइसोटोप के सीलबंद स्रोतों और विकिरण देने वाले यंत्रों का उपयोग, केंसर शरीर के किस भाग में है इस पर निर्भर करता है। यदि अंग ऐसा है जहां सीलबंद स्रोत को केंसर पीड़ित अंग से सटा कर रखा जाना संभव है जैसे महिलाओं में योनि का केंसर या शरीर के ऊपरी भागों जैसे मुंह, खाल आदि का केंसर, तो ऐसे सीलबंद स्रोतों का प्रयोग किया जाता है। इन स्रोतों को कितने समय तक उस अंग पर रखा जाना है यह केंसर के आकार और स्रोत की तीव्रता (प्रति सेकंड विकिरण संख्या) और स्रोत से निकलने वाले विकिरण की ऊर्जा पर निर्भर करता है। यदि विकिरण की बहुत अधिक मात्रा देनी हो तो उसे प्रायः कुछ दिनों के अन्तर पर कई बार विकिरण इलाज करके दी जाती है। ऐसे स्रोतों के उपयोग में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि केंसर वाले अंग को तो विकिरण मिले परन्तु अन्य निकट वाले स्वस्थ अंगों को कम से कम विकिरण मिले। इसके लिए अनेकों एप्लीकेटर नामक उपकरणों का प्रयोग किया जाता है जो स्वस्थ अंगों की दिशा में निकलने वाले विकिरणों का अवशोषण करते हैं।

टेलीचिकित्सा पद्धति

यदि केंसर शरीर के भीतरी अंगों में है जहां सीलबंद स्रोत को पहुंचाना संभव नहीं है तो बाहर से ही टेलीचिकित्सा यंत्रों के उपयोग से उन्हें विकिरण दिया जाता है। इसके लिए प्रायः गामा विकिरण का प्रयोग

किया जाता है जो सबसे अधिक पदार्थभेदी होते हैं। जिस रेडियोआइसोटोप का इस कार्य में सबसे अधिक प्रयोग होता है वह है कोबाल्ट-60 क्योंकि इससे निकलने वाले गामा विकिरण बहुत ऊर्जा वाले होते हैं और बड़ी मात्रा में शरीर के अंदर के किसी अंग तक पहुंचाए जा सकते हैं। इसकी अर्धायु लगभग 5 वर्ष होने के कारण विकिरण स्रोत को जल्दी बदलना नहीं पड़ता। यह रेडियोआइसोटोप परमाणु रिएक्टर में आसानी से बनाया जा सकता है।

बाहर से विकिरण देने में समस्या यह आती है कि कैंसर वाले अंग तक पहुंचने से पहले विकिरण बाहरी त्वचा से लेकर उस अंग तक बीच में आने वाले सभी अंगों को भी विकिरण देता है जिससे स्वस्थ कोशिकाओं और अंगों को हानि हो सकती है। इस हानि को कम करने के कई उपाय प्रचलित हैं इनमें सबसे व्यापक तरीका स्रोत को घुमाना है। इस प्रक्रिया में एक गोलाकार पथ पर स्रोत को घुमाया जाता है और इस पथ को इस प्रकार रखा जाता है कि कैंसर पीड़ित अंग सदैव इस गोलाकार पथ के केंद्र पर रहे। इस प्रकार घूमते हुए स्रोत से निकलने वाला विकिरण सदैव कैंसर वाले अंग तक तो पहुंचता ही है पर बीच में आने वाले अंग बदलते रहते हैं और उनमें से प्रत्येक को अपेक्षाकृत बहुत कम विकिरण मात्रा मिलती है। कुछ अन्य तरीके भी अपनाए जाते हैं जैसे यदि पेट में कैंसर हो तो कभी तो उसे सीधा लिटा कर विकिरण दिया जाता है और कभी पेट के बल। इस प्रकार अन्य अंगों को मिलने वाला विकिरण और भी वितरित हो जाता है। ऐसे टेली-चिकित्सा यंत्र भी बने हैं जिसमें मरीज को उल्टा और सीधा लिटाने की आवश्यकता नहीं होती है। इनमें दो स्रोतों का प्रयोग किया जाता है जो गोलाकार पथ पर ऊपर और नीचे ऐसे घूमते हैं कि कैंसर पीड़ित अंग को आधी विकिरण मात्रा पीठ की ओर से और आधी पेट की ओर से मिलती है।

भारत में ही विकसित ऐसे एक यंत्र को "जेनस" टेली-चिकित्सा यंत्र के नाम से जाना जाता है। आजकल "त्वरक" या एक्सीलरेटर नामक संयंत्र का भी उपयोग कैंसर चिकित्सा में होने लगा है। इससे निकलने वाले विकिरण भी उसी प्रकार काम में लाए जाते हैं जैसे रेडियोआइसोटोप स्रोत।

रोग निदान में रेडियोआइसोटोप

चिकित्सा की अपेक्षा रोगों के निदान में रेडियोआइसोटोप के कहीं अधिक व्यापक उपयोग हो रहे हैं। अधिकांश उपयोगों के तरीके तो बताना संभव नहीं परन्तु उनके पीछे रेडियोआइसोटोप के जिन चमत्कारिक गुणों का प्रयोग होता है उनकी कुछ जानकारी उपयोगी होगी। जिन गुणों का प्रायः उपयोग किया जाता है वह मुख्य रूप से दो हैं (1) विकिरण की पदार्थ भेदन शक्ति (2) विकिरण की सूक्ष्मतम मात्राओं को नाप सकने की क्षमता। कैसे इन गुणों का उपयोग किया जाता है इसके लिए कुछ उदाहरण सहायक होंगे।

यदि हमें किसी रोगी की थाइराइड नामक ग्रंथि के ठीक से काम करने पर संदेह है तो शरीर के अंदर होने के कारण (गले के पास) इसका सबसे सरल तरीका यह है कि उसे आयोडीन नामक तत्व के उपयुक्त यौगिक को दें जिसमें से कुछ मात्रा रेडियोआइसोटोप के रूप में आयोडीन (आयोडीन-131) की हो। हमें पता है कि शरीर के अंदर जाने पर आयोडीन सदैव थाइराइड ग्रंथि में जाकर एकत्रित हो जाती है। अतः यह दी हुई आयोडीन भी वहीं पहुंचेगी और बाहर से ही उपयुक्त विकिरण मापन यंत्रों की सहायता से हम थाइराइड ग्रंथि का चित्र इन यंत्रों की सहायता से उसी प्रकार निकाल सकते हैं जैसे एक्स-रे के इस्तेमाल से फेफड़ों का (एक्स-रे भी परमाणु ऊर्जा का ही अत्यन्त व्यापक उपयोग

है)। समय समय पर चित्र लेने से थाइराइड ग्रंथि के ठीक होने या न होने की पूरी जानकारी हमें मिल सकती है। यदि उसके किसी भाग में रेडियोआइसोटोप न पहुंचे तो चित्र से उस भाग के ठीक से काम न करने का पता चलता है। उसके आकार का भी पता लग जाता है। जिन लोगों की यह ग्रंथि अधिक सक्रिय होती है उनकी आंखें बहुत बड़ी और बाहर को निकलती सी दिखाई देती हैं। यह ग्रंथि व्यक्ति के शारीरिक बढ़त का भी निर्धारण करती है। इसी प्रकार अन्य रेडियोआइसोटोपों का प्रयोग दूसरे अंगों के रोगों के निदान में किया जाता है। थाइराइड ग्रंथि में यदि कैंसर का पता लगे तो उसके उपचार में भी इसी रेडियोआइसोटोप (आयोडीन-131) का प्रयोग किया जाता है। परन्तु निदान की अपेक्षा इलाज में इसकी मात्रा बहुत अधिक देनी होती है।

दूसरे प्रकार के उपयोगों में विभिन्न दवाओं जैसे विटामिन आदि को किसी उपयुक्त रेडियोआइसोटोप द्वारा अंकित किया जाता है। ऐसे पदार्थों को अंकित यौगिक या लेबिल्ड कम्पाउंड कहते हैं। वास्तव में इसमें योगिक के किसी भाग के तत्व को उसी के रेडियोआइसोटोप से बदल दिया जाता है। ऐसे पदार्थों की मदद से विभिन्न रोगों और शरीर की विभिन्न क्रियाओं का अध्ययन किया जा सकता है। इसमें योगिक को शरीर में पहुंचाने के बाद या तो बाहर से उनका चित्र या फिर निश्चित समय के बाद रोगी के रक्त, मलमूत्र आदि के नमूनों में विकिरण मापन से रोगों का निदान किया जाता है। इसी तकनीक के एक उदाहरण को रिया (Radio Immuno Assay) कहते हैं। इससे शरीर की विभिन्न रोगों के प्रति प्रतिरक्षण शक्ति का भी पता लगा सकते हैं। भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र ने ऐसे अनेकों रेडियोआइसोटोप योगिकों का निर्माण किया है। इनके उपयोग से संबंधित सलाह और ट्रेनिंग भी यहां दी जाती है।

संक्षेप में परमाण् ऊर्जा ने हमें रोग निदान और उनके इलाज के लिए अनेकों तरीके दिए हैं जिनके लिए पहले कुछ भी करना संभव न था।

विकिरण के जीवाणु नाशक गुण का, पदार्थभेदी गुण के साथ मिलाकर एक अत्यन्त उपयोगी प्रयोग शल्य चिकित्सा में काम आने वाले यंत्रों का जीवाणुनाशन करना है। अभी तक इसके लिए इन यंत्रों और उपकरणों को बहुत देर तक पानी में उबाला जाता था। उसमें कीटनाशक दवाएं भी डाली जाती थीं। यह कार्य शल्य क्रिया करने से तुरंत पहले करना होता था। गांवों एवं कम सुविधा वाली छोटी जगहों पर इसमें कठिनाई होती थी और फिर भी सदैव रोग संक्रमण (infection) का डर बना रहता था। ऐसे स्थानों में कैंप लगाकर मोतियाबिंदु, परिवार नियोजन जैसी शल्य क्रियाओं में यह समस्या अक्सर पाई जाती थी। अब परमाणु ऊर्जा की देन रेडियोआइसोटोप ने यह कार्य बहुत सरल कर दिया है। इसमें जिन यंत्रों और उपकरणों की आवश्यकता होती है। उनको प्लास्टिक की थैलियों में सीलबंद कर इन थैलियों को लकड़ी के बक्सों में पैक कर दिया जाता है। इन बक्सों को भाभा परमाणु केंद्र स्थित आइसोमेड नामक प्लांट में भेजा जाता है जहा इसे कुछ समय के लिए रेडियोआइसोटोप कोबाल्ट-60 के शक्तिशाली स्रोत के पास से घुमा दिया जाता है (बिना बक्सा खोले)। इससे बक्से के अन्दर रखे सभी यंत्रों और उपकरणों का पूरी तरह जीवाणुनाशन हो जाता है। फिर जहां शल्य चिकित्सा करनी होती है वहीं इन प्लास्टिक थैलियों को खोलकर सीधा इस्तेमाल किया जाता है। ऐसे सस्ते यंत्रों (प्लास्टिक आदि के) का भी विकास हो गया है जो एक बार काम में लेने के बाद फेंक दिए जाते हैं। इस प्रकार अब रोग संक्रमण का शल्य क्रिया में कोई भय नहीं रहा है। इस उपयोग को व्यापक बनाने की कोशिश हो रही है। □□□

10

रेडियोआइसोटोप ऊर्जा स्रोत

परमाणु ऊर्जा के उपयोग से बिजलीघरों के निर्माण पर हम विस्तार में चर्चा कर चुके हैं। इसके लिए हमें विभिन्न प्रकार के परमाणु रिएक्टरों का उपयोग कर ताप उत्पन्न करना होता है। ताप से भाप बनाकर उसका उपयोग सामान्य बिजली उत्पादकों (जनरेटरों) को घुमाने में किया जाता है। हमने यह भी देखा कि ऐसे रिएक्टरों का प्रयोग पानी के जहाज़ और पनडुब्बियों में भी किया जा चुका है। अन्तरिक्ष के लिए भी ऐसे रिएक्टरों की परिकल्पना अमरीका और रूस जैसे विकसित देशों ने की है जिनका उपयोग चन्द्रमा पर लम्बे समय तक बड़ी मात्रा में बिजली उत्पादन के लिए किया जा सके। मानव-रहित उपकरणों को अन्य नक्षत्रों पर लम्बे समय तक बिजली प्रदान करने या अंतरिक्ष में निरंतर घूमने वाली प्रयोगशालाओं के लिए भी सोचा गया है। ऐसे रिएक्टर सामान्य रिएक्टरों से कुछ भिन्न होते हैं क्योंकि इनका वजन कम होना चाहिए और इनका परिचालन स्वचालित होना चाहिए। अमरीका ने इन कार्यों के लिए स्नैब (स्पेस न्यूक्लियर आक्सीलरी पावर) नामक योजना के अन्तर्गत कई रिएक्टरों पर विचार किया है और उनकी कठिनाइयों पर भी विस्तार से अनुसंधान किया है। परन्तु अभी इनका

उपयोग व्यापक रूप से नहीं किया है। अधिकांश उपयोग गोपनीय क्षेत्र में हुए हैं। इसके विपरीत परमाणु ऊर्जा की ही देन रेडियोआइसोटोप का व्यापक प्रयोग इस कार्य के लिए किया गया है। रेडियोआइसोटोप बिजली उत्पादकों का उपयोग सबसे आकर्षक वहां है जहां लम्बे समय तक बिजली तो चाहिए परन्तु उतनी अधिक मात्रा में नहीं जितनी रिएक्टरों से मिल सकती है। आपने पढ़ा होगा कि सौर पैनल का उपयोग कृत्रिम उपग्रहों में व्यापक रूप से इस कार्य के लिए हो रहा है। फिर रेडियोआइसोटोप ऊर्जा उत्पादकों की क्या आवश्यकता है? जैसा कि आप जानते होंगे कि सौर पैनल में सौर सेलों का बड़ी संख्या में प्रयोग होता है। इन पर सूर्य की रोशनी पड़ने पर यह बिजली प्रदान करते हैं जिसका उपयोग उपग्रह के यंत्रों को चलाने में किया जाता है। ऐसे ही सौर पैनल के द्वारा भारतीय संचार उपग्रह इनसैट-1 सी में भी ऊर्जा उत्पन्न की जाती है। इस उपग्रह से तो हम सब भलीभांति परिचित हैं। दूरदर्शन के देशव्यापी कार्यक्रमों में मौसम की जानकारी और ऊपर से लिए भारत के चित्रों से आप परिचित हो चुके हैं। इससे आपको इसकी उपयोगिता का पता भी चला है। इसके अलावा रेडियो और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर टेलीफोन आदि में इनके योगदान से भी सभी आज परिचित हैं। इस उपग्रह की ऊंचाई बहुत अधिक होने के कारण और इसकी घूमने की गति पृथ्वी जितनी ही होने के कारण अधिकांश समय इसका सौर पैनल सूर्य से प्रकाश प्राप्त कर सकता है और बिजली पैदा कर सकता है। कल्पना कीजिए उस उपकरण की जो चन्द्रमा पर वहां की जानकारी पृथ्वी पर भेजने के लिए स्थापित किया गया हो। चन्द्रमा पर लम्बे समय की रातें होती हैं अतः सौर पैनलों के उपयोग से अंधेरे पक्ष में हमें कुछ भी जानकारी न मिल सकेगी। इसी प्रकार पृथ्वी की परिक्रमा कर रहे उन उपग्रहों की भी कल्पना करें जिन्हें काफी देर तक सूर्य की रोशनी न

मिले तो ऐसी अवस्था में रेडियोआइसोटोप ऊर्जा उत्पादकों का प्रयोग बहुत उपयोगी होगा। वैसे तो सौर पैनल के साथ ऊर्जा संचित करने वाली विधियों का भी विकास किया गया है। जैसे कार में बैटरी होती है जो कार चलने पर उसके डायनेमों द्वारा उत्पन्न बिजली को संचित करती रहती है और कार को स्टार्ट करते समय स्टार्टर को घुमाने आदि के लिए बिजली प्रदान करती है। परन्तु ऐसे बिजली संचित करने वाले उपकरण उपग्रह का भार बढ़ा देते हैं और इनमें संचित करने के लिए अतिरिक्त बिजली प्रदान करने के लिए सौर पैनलों का आकार भी बढ़ाना होता है। व्यावहारिक रूप में केवल उतनी ही बिजली संचन की व्यवस्था उपग्रह में की जाती है जो सूर्य की रोशनी उपलब्ध न होने पर उपग्रह के सभी उपकरण न चलाकर आवश्यक उपकरणों को चलाने के लिए काफी हो। रेडियोआइसोटोप ऊर्जा उत्पादकों का उपयोग ऐसे कार्यों के लिए आकर्षक है। यह वहां भी आवश्यक हो जाता है जहां कुछ अधिक बिजली चाहिए।

अंतरिक्ष और दूसरे ग्रहों पर बिजली उत्पन्न करने के लिए तो रेडियोआइसोटोप बिजली उत्पादक उपयोगी हैं ही, पृथ्वी पर भी सुदूर एवं मानव-रहित क्षेत्रों से रेडियो संपर्क एवं अन्य कार्यों (जैसे बर्फ से ढके पहाड़ों पर, सागर के बीच बने लाइट हाऊस में रोशनी के लिए) के लिए आवश्यक बिजली देने के लिए भी ऐसे बिजली उत्पादक उपयोग में लाए जाते हैं। अब देखें कि इनसे ऊर्जा बिजली के रूप में कैसे मिल सकती है।

रेडियोआइसोटोप से निकलने वाले विकिरण से जुड़ी ताप ऊर्जा को किसी धातु द्वारा अवशोषित करने पर उसका तापमान बढ़ता है इस ताप ऊर्जा को विशेष प्रकार के उपकरणों, जिन्हें ताप बिजली उत्पादक कहते हैं, की सहायता से बिजली में परिवर्तित किया जाता है। अतः सिद्धांत

चित्र 22. रेडियोआइसोटोप बिजली उत्पादक की संरचना

रूप में यह अत्यन्त सरल है। ताप बिजली उत्पादक का सबसे प्रचलित उदाहरण थर्मोकपल है। यदि दो भिन्न धातुओं के दो तारों को जोड़ें और एक जोड़ (जन्कशन) को यदि दूसरे की अपेक्षा उच्च तापमान पर रखें तो इन तारों में बिजली प्रवाहित होती है। यदि ऐसे सैंकड़ों थर्मोकपल के एक जन्कशन को हम रेडियो-आइसोटोप द्वारा उत्पन्न ताप प्रदान करें तो हमें पर्याप्त बिजली मिल सकती है। इस प्रकार के रेडियो-आइसोटोप बिजली उत्पादकी संरचना चित्र 22 में दिखाई गई है। इसमें उन्हीं रेडियोआइसोटोपों का प्रयोग किया जाता है जो अल्फा तथा बीटा विकिरण देते हैं ताकि अधिक ताप मिल सके और इनके विकिरण को उत्पादक के खोल द्वारा आसानी से रोका जा सके। इससे इन्हें लाने ले जाने वाले व्यक्ति के स्वास्थ्य को विकिरण के कुप्रभावों का सामना नहीं करना पड़ता। एक और आवश्यक गुण ऐसे रेडियोआइसोटोप का होता है अधिक अर्धायु ताकि लम्बे समय तक इनसे बिजली मिलती रहे। प्रायः 100 दिन से 100 वर्ष के बीच अर्धायु वाले रेडियोआइसोटोप इस कार्य के लिए सबसे उपयुक्त होते हैं। अर्धायु बहुत अधिक होने पर पर्याप्त विकिरण दर प्राप्त करने के लिए रेडियोआइसोटोप की बहुत अधिक मात्रा आवश्यक होगी जिससे उत्पादक का आकार बड़ा हो जाता है।

सारणी 4 में अमरीका द्वारा स्नेप कार्यक्रम के अंतर्गत विकसित कुछ स्रोतों को बताया गया है। उनके भौतिक आंकड़े भी दिए गए हैं।

सारणी 4

अमरीका द्वारा विकसित रेडियोआइसोटोप बिजली उत्पादकों के आंकड़े (इन्हें स्नेप संख्या द्वारा बताया गया है)

नाम (स्नेप संख्या)	उपयोग	बिजली उत्पादन दर (वाट)	आकार (व्यास×लंबाई)	भार (किलोग्राम)	इस्तेमाल की गई रेडियोआइसोटोप	उत्पादक का कार्यकाल
3	परीक्षण स्रोत	2.5	12 × 13	1.75	पोलोनियम-210	90 दिन
3 ए	उपग्रह बिजली	2.7	12 × 13	2.00	प्लूटोनियम-238	5 वर्ष
7 बी	समुद्र के बीच प्रकाश स्रोत	60	55 × 86	2200	स्ट्रान्शियम-90	2 वर्ष
7 सी	मौसम स्टेशन	10	50 × 53	900	स्ट्रान्शियम-90	2 वर्ष
7 एफ	सागर तेल अन्वेषण	60	55 × 86	2200	स्ट्रान्शियम-90	2 वर्ष
9 ए	उपग्रह बिजली	25	50 × 24	13	प्लूटोनियम-238	5 वर्ष
17	संचार उपग्रह	25	60 × 35	14	स्ट्रान्शियम-90	5 वर्ष
19 बी	निम्बस-बी मौसम उपग्रह	30	55 × 25	14	प्लूटोनियम-238	5 वर्ष
23	पृथ्वी पर उपयोग में	60	63 × 63	400	स्ट्रान्शियम-90	5 वर्ष
27	चंद्रमा पर उतारा गया	60	45 × 45	14	प्लूटोनियम-238	5 वर्ष
29 ए	विभिन्न अंतरिक्ष यात्राएं	500	—	220	पोलोनियम-210	90 दिन

सभी स्रोत बेलनाकार आकार के होते हैं जिनका व्यास और लम्बाई सेंटीमीटर में (लगभग) दी गई है। भार (लगभग) किलोग्राम में है।

System for Nuclear Auxiliary Power (स्नेप)

इनका एकमात्र अनाकर्षक पहलू यह है कि इनके इस्तेमाल में वह सभी सावधानी बरतना आवश्यक होता है जो अन्य रेडियोआइसोटोप के उपयोग में आवश्यक होती हैं, क्योंकि यदि किसी दुर्घटना में रेडियोआइसोटोप (ईंधन) पर्यावरण में बिखर जाएं तो उनसे मानव स्वास्थ्य को हानि की संभावना होती है वैसे इनके निर्माण में ऐसी संभावना को कम से कम करने के उपाय किये जाते हैं।

वह दिन दूर नहीं जब परमाणु ऊर्जा के उपयोगों द्वारा उत्पन्न रेडियोसक्रिय अपशिष्ट पदार्थों का अधिकाधिक प्रयोग ऊर्जा उत्पादन के लिए करना संभव हो सकेगा। इससे हमें ऊर्जा तो प्राप्त हो ही सकेगी परन्तु एक और लाभ ऐसे अपशिष्ट पदार्थों के उपयोगी रूप में इस्तेमाल से इनके भंडारन से जुड़ी समस्याओं का हल प्राप्त करना होगा।

11

कृषि में उपयोग

कृषि के क्षेत्र में भी रेडियोआइसोटोपों के व्यापक उपयोग किए गए हैं। इनके उपयोग से अच्छी नस्ल के बीज और पौधे विकसित किए गए हैं। खाद्य पदार्थों के संरक्षण में भी इनका महत्वपूर्ण योगदान है। अन्य प्रकार के उपयोगों के लिए अंकित खाद (Labelled fertilizer), अंकित कीटनाशकों आदि का विकास किया गया है जिसमें सामान्य खाद या कीटनाशक आदि के कुछ परमाणुओं को उनके रेडियोआइसोटोप से बदल दिया जाता है। इनके उपयोग से पौधों द्वारा खाद की ग्राह्य क्षमता, कीटनाशक कितने प्रभावशील हैं आदि बातों का अध्ययन आसानी से किया जा सकता है क्योंकि इन अंकित पदार्थों की बहुत सूक्ष्म मात्राओं को पौधे के विभिन्न भागों में मापा जा सकता है (कृपया परिशिष्ट I देखिए)।

नई किस्मों का विकास

जब भी हम कोई फसल उगाते हैं तो उसमें सभी पौधे एक जैसे नहीं होते क्योंकि सभी बीज एक जैसे नहीं होते। उनकी कोशिकाओं या सेलों के नस्ल निर्धारण अंग जिन्हें जीन कहते हैं एकदम एक जैसे नहीं

होते। जब यह पौधे उगते हैं तो उनके "जीन" में कुछ परिवर्तन, जिन्हें म्यूटेशन कहते हैं प्राकृतिक रूप से होते रहते हैं। सभी म्यूटेशन हानिकारक भी नहीं होते और लाभकारी भी नहीं अतः कृषि वैज्ञानिक इन पौधों में से जो अच्छी किस्म के हों उन्हें वह अलग कर उनके बीजों को अलग से एकत्रित करते हैं और फिर उनकी सहायता से नई फसल उगाते हैं और फिर उसमें से कुछ पौधों का चुनाव करते हैं। यह प्रक्रिया कई बार दोहराई जाती है और इसमें बहुत समय लगता है तब जाकर नए और अच्छी किस्म के बीज प्राप्त होते हैं। इनको बड़ी संख्या में प्राप्त करने के लिए भी इनकी कई पीढ़ियाँ उगानी होती हैं।

कृषि वैज्ञानिकों की इस लम्बी तपस्या और प्रत्येक फसल में कुछ ही अच्छे किस्म के पौधे मिलने की समस्या को परमाणु ऊर्जा की देन रेडियोआइसोटोप विकिरण स्रोतों ने आसान कर दिया है। यदि हम बीजों या कुछ पौधों के विभिन्न भागों को रेडियोआइसोटोपों की सहायता से विकिरण दें तो उनमें उत्पन्न म्यूटेशनों की संख्या प्राकृतिक म्यूटेशनों की तुलना में बहुत अधिक की जा सकती है। इससे उपयुक्त म्यूटेशन वाले पौधों का चुनाव आसान हो जाता है और उनकी उतनी अधिक फसलें उगाने की आवश्यकता नहीं होती। इसी तकनीक के प्रयोग से मूंगफली, दालों आदि की उन्नत किस्मों का विकास भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र एवं भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, दिल्ली में किया गया है। चित्र 23 में कुछ उन्नत किस्मों को दिखाया गया है। इस प्रकार विकसित किस्मों से अधिक पैदावार होती है और पौधों की बीमारी आदि की संभावना कम होती है। अनेकों ऐसे अनुसंधान चल रहे हैं जिनके परिणाम निकट भविष्य में देखने को मिलेंगे। कुछ नई किस्मों का व्यापक प्रयोग खेती में होने लगा है।

चित्र 23 (क) सामान्य और विकिरण प्रयोग द्वारा विकसित बड़े दानों वाली मूंगफली के पौधे
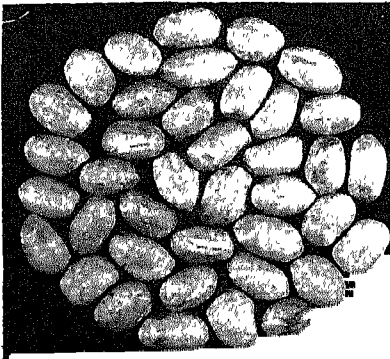
चित्र 23 (ख) मूंगफली की सामान्य और विकिरण द्वारा विकसित क़िस्मों के आकारों में अंतर

अंकित खाद, कीटनाशकों आदि से अध्ययन

अच्छी पैदावार के लिए ज़रूरी है कि उपयुक्त मात्रा में खाद, पानी आदि पौधों को मिले और फसल पर कीटों आदि के हानिकारक प्रभाव कम से कम हों। इसके लिए यह जानना आवश्यक होता है कि पौधे खाद के उपयोगी पदार्थों को मिट्टी से कितना ग्रहण करते हैं। बहुत अधिक मात्रा में खाद देने पर आर्थिक हानि तो होती ही है आगे आने वाली फसलों को हानि भी हो सकती है। इसी प्रकार कितने कीटनाशक का छिड़काव और कब करना सबसे उपयोगी होगा यह जानना आवश्यक है। जरूरत से अधिक छिड़काव मिट्टी के लिए हानिकारक हो सकता है। इन सभी के अध्ययन में अंकित खाद, अंकित कीटनाशक आदि बहुत उपयोगी होते हैं क्योंकि जैसा बताया जा चुका है कि इनका मापन बहुत सरल और सूक्ष्म मात्राओं में संभव है। इससे पौधों द्वारा नाइट्रोजन आदि का ग्रहण किया जाना आसानी से जाना जा सकता है। इस कार्य के लिए आवश्यक अनेकों प्रकार के अंकित-यौगिकों का विकास हो चुका है। सारणी 5 में ऐसे कुछ पदार्थ दिए गए हैं जो भाभा परमाणु केंद्र से उपलब्ध हैं।

खाद्य-पदार्थों का संरक्षण

हम देखते हैं कि आलू, प्याज़ आदि को हम शीतकक्षों (कोल्ड स्टोरेज) में न रखें तो उनमें प्रस्फुटन होने लगता है और उन्हें लम्बे समय तक काम में नहीं लाया जा सकता। यह कार्य भी परमाणु ऊर्जा द्वारा निर्मित रेडियोआइसोटोपों ने बहुत आसान और सस्ता कर दिया है। शल्य-चिकित्सा उपकरणों की ही तरह यदि आलू, प्याज़ आदि को कोबाल्ट-60 जैसे रेडियोआइसोटोप से निकलने वाली गामा किरणों से

सारणी 5

भारत में उपलब्ध, कृषि अनुसंधान में उपयोगी, कुछ अंकित पदार्थ

यौगिक	रेडियोआइसोटोप (जिससे अंकित)
खादें	
सुपर-फास्फेट-P 32	फास्फोरस-32
मोनेटाइट	,,
ब्रुशाइट	,,
कीटनाशक	
पेराथियान-P 32	,,
पेराथियान-S 35	सल्फर-35
डायज़िनान-P 32	फास्फोरस-32
डाइमिथोएट-P 32	,,
प्राथमिक रेडियोआइसोटोप	
कैल्शियम क्लोराइड, नमक के अम्ल में	कैल्शियम-45
कोबाल्ट क्लोराइड, नमक के अम्ल में	कोबाल्ट-60

इनके अलावा प्रत्येक प्रकार के अनेको अन्य यौगिक भी उपलब्ध हैं।

एक बार विकिरणित कर दिया जाए तो उनमें प्रस्फुटन नहीं होता और उन्हें शीतकक्षों में रखने की आवश्यकता नहीं होती। भारत सरकार ने 1986 में इस विधि को व्यावसायिक तौर पर अपनाए जाने की की अनुमति दे दी है अत: निकट भविष्य में आपको ऐसे संस्थान देश के विभिन्न क्षेत्रों में देखने को मिलेंगे जहां आप कुछ मिनटों के लिए इन पदार्थों को विकिरण दे कर वापिस ला सकेंगे और लम्बे समय तक इनका उपयोग कर

सकेंगे। आगे चलकर इस तकनीक का प्रयोग अन्य खाने की चीज़ों के संरक्षण में भी होने की आशा है जैसे समुद्री खाद्य पदार्थ मछली, केकड़ा, झींगा आदि। इनके प्रयोग अपार हैं जैसे पकाई हुई रोटी को विकिरण देने के बाद आप लम्बे समय तक इन रोटियों को रख सकते हैं न तो इनका स्वाद बिगड़ेगा और न इन पर फफूंदी लगेगी। जब चाहें आप गर्म करके इन्हें खा सकते हैं। विकिरण की जीन म्यूटेशन क्षमता ने विज्ञान की एक नई शाखा को जन्म दिया है जिसे जैव इंजीनियरिंग कहते हैं। जैसे इंजीनियरी उद्योग में हम नए नए उपकरणों का निर्माण करते हैं वैसे ही जीन म्यूटेशन प्रक्रिया ने हमें ऐसी संभावनाएं प्रदान की हैं जिनके द्वारा हम बिलकुल नए प्रकार की नस्लें पैदा कर सकते हैं। दो प्रकार के पौधों के मिले-जुले गुणों वाले तीसरे पौधे का विकास कर सकते हैं। यह तकनीक पौधों तक ही सीमित नहीं है। जीवजन्तुओं में भी ऐसे ही प्रयोग हो रहे हैं। यह काफी जटिल और कई प्रकार के वैज्ञानिक क्षेत्रों का मिलाजुला कार्य है। अतः इस पुस्तिका में इस पर और अधिक चर्चा नहीं करेंगे।

□□□

12

औद्योगिक उपयोग

अन्य क्षेत्रों में उपयोगों की भांति यहां भी हम कुछ व्यापक उपयोगों की ही चर्चा करेंगे जिससे आपको परमाणु ऊर्जा के चमत्कारिक गुणों की एक झलक मिल सके और इनके बारे में अधिक जानने की उत्सुकता बढ़ सके।

औद्योगिक रेडियोग्राफी

इस उपयोग को चित्र 24 में दिखाया गया है। जिस जोड़ (वेल्ड) के ठीक होने का निरीक्षण करना है उसके एक ओर कोबाल्ट-60 या इरीडियम-192 रेडियोआइसोटोप स्रोत (या अन्य उपयुक्त रेडियोआइसोटोप) को रखा जाता है और दूसरी ओर एक्स-रे में काम आने वाली जैसी ही फिल्म को रखते हैं। कुछ ही सेकेंडों (कभी-कभी मोटाई अधिक होने पर मिनटों) में उस वेल्ड का चित्र इस फिल्म पर आ जाता है जिससे उस वेल्ड या जोड़ के ठीक होने या न होने का पता लग जाता है। यह इसलिए संभव होता है क्योंकि कोबाल्ट-60 के गामा विकिरण लोहे की मोटी पाइपों को पार कर वैसा ही चित्र अंकित करते हैं जैसा एक्स-रे फेफड़ों आदि का। इसके लिए अधिक तीव्रता वाले स्रोत की
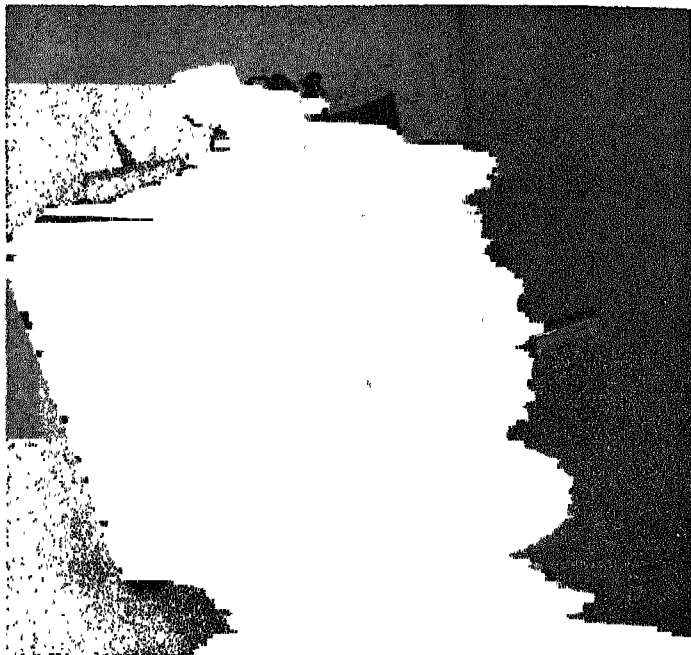
चित्र 24. रेडियोग्राफी कैमरा

आवश्यकता होती है अतः इन्हें सीसे के बने खोल के अंदर रखा जाता है जिसमें बना छेद चित्र लेते समय उसी प्रकार खोला जाता है जैसे चित्र लेते समय कैमरे का शटर। इसीलिए इस उपकरण को रेडियोग्राफी कैमरा कहते हैं। ऐसा करना इसलिए आवश्यक होता है कि इससे काम करने वाले व्यक्तियों को विकिरण की अधिक मात्रा न मिले। सैकड़ों मील लम्बी तेल, गैस आदि की पाइपलाइनों के हज़ारों वेल्डों (जोड़ों) का

परीक्षण इस तकनीक से बहुत जल्दी, भलीभांति और कम खर्च में हो सकता है।

तल मापक

विकिरण के पदार्थभेदी गुण का प्रयोग स्वचालित तल मापकों के विकास में किया गया है। यदि किसी नली में किसी द्रव के तल का पता लगाना है तो उसके एक ओर रेडियोआइसोटोप स्रोत रखा जाता है और दूसरी ओर विकरण मापक यंत्र (चित्र 25)। यदि द्रव का तल अपेक्षित ऊंचाई पर है तो मापक यंत्र में कुछ निश्चित विकिरण दर आएगी। यदि यह तल इससे ऊंचा है तो विकिरण दर कम आएगी क्योंकि कुछ विकिरणों का अवशोषण इस अतिरिक्त द्रव द्वारा हो जाएगा। यदि तल अपेक्षित से कम है तो विकिरण दर निर्धारित से अधिक होगी क्योंकि विकिरण
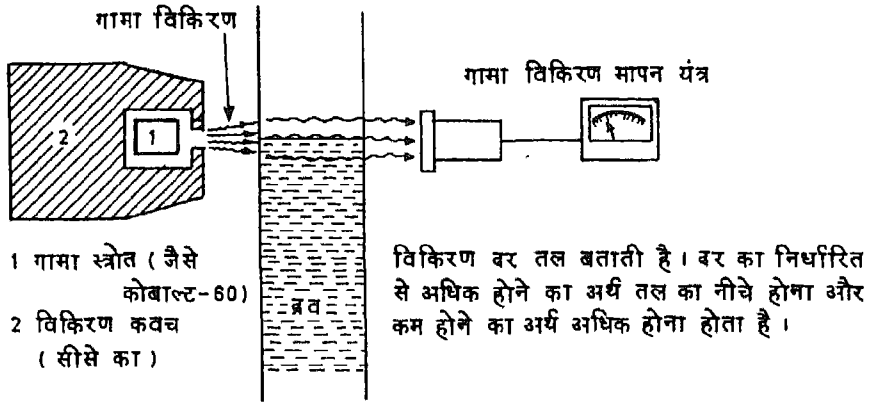
चित्र 25. तल मापक का सिद्धांत

अवशोषण के लिए कम द्रव उपलब्ध होगा। इसी सिद्धांत के उपयोग से अनेकों प्रकार के तल नियंत्रक और बोतलों में द्रवों की निश्चित मात्रा भरने वाले उपकरण बनाए गए हैं। तल नियंत्रकों द्वारा पहले निश्चित ऊंचाई (तल) तक द्रव को भरा जाता है फिर इस प्रकार प्राप्त निश्चित मात्रा को खाली बोतल, डिब्बे आदि में भर दिया जाता है। यह सभी कार्य पूरी तरह स्वचालित ढंग से होता है।

मोटाई मापक यंत्र

तल मापक यंत्रों की ही भांति धातुओं की चादरों और पाइपों आदि
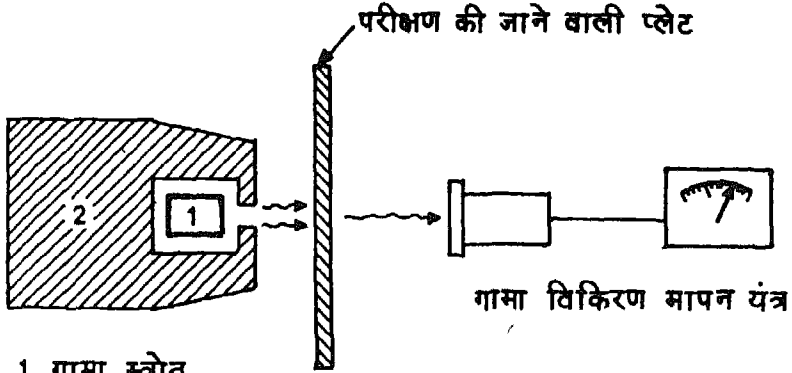
सिद्धात रुप में यह तल मापक जैसा ही होता है । मोटाई अधिक होने पर विकिरण दर कम होती जाती है ।

चित्र 26. मोटाई मापक का सिद्धांत

की मोटाई मापने के लिए भी विकिरण के पदार्थभेदी गुण का उपयोग किया जाता है। यह तकनीक चित्र 26 में दिखाई गई है। इसमें गामा विकिरण देने वाले रेडियोआइसोटोप (जैसे कोबाल्ट-60, सीजियम-137 आदि) से निकलने वाले विकिरणों को पाइप या चादर को बीच में रखकर दूसरी ओर रखे मापन यंत्र से मापते हैं। जितनी मोटाई अधिक होगी उतनी ही कम विकिरण दर, मापन यंत्र द्वारा अंकित होगी। विकिरण दर को मोटाई की इकाई में अंकित कर सीधे पढ़ा जा सकता है। बहुत पतली परतों को नापने में यह उतनी उपयोगी तकनीक नहीं है क्योंकि उनके द्वारा विकिरण का अवशोषण इतना कम होगा कि उसे बहुत शुद्धता से
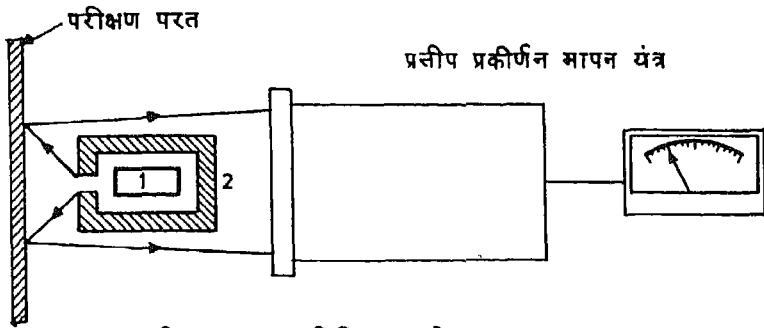
1. बीटा व गामा विकिरण स्त्रोत
2. विकिरण कवच (गामा स्त्रोत के लिए अधिक मोटा)

बहुत पतली परत के लिये बीटा स्त्रोत और बीटा प्रतीप विकिरण मापक यंत्र का प्रयोग किया जाता है। कुछ मोटी परत (लगभग 1 मिली मीटर) के लिए गामा स्त्रोत और गामा प्रतीप विकिरण मापन यंत्र का प्रयोग किया जाता है।

चित्र 27. प्रतीप प्रकीर्णन यंत्र का सिद्धांत

नहीं मापा जा सकता।

बहुत पतली परतों की मोटाई नापने के लिए अवशोषण के स्थान पर विकिरण के प्रकीर्णन गुण का लाभ उठाया जाता है। इसे चित्र 27 में दिखाया गया है। मोटाई के अनुसार बीटा या गामा विकिरण स्रोत का प्रयोग किया जाता है। बीटा विकिरण की पदार्थभेदी शक्ति कम होती है और गामा विकिरण की अधिक। अतः यदि परत बहुत पतली है (1 मिलीमीटर का भी बहुत कम भाग) तो बीटा विकिरण देने वाले रेडियोआइसोटोप का प्रयोग किया जाता है क्योंकि गामा किरणें इसे भेद जाएंगी और उनका प्रकीर्णन कम होगा और यदि परत इससे मोटी है तो गामा विकिरण देने वाले रेडियोआइसोटोप का उपयोग किया जाता है। इस तकनीक में विकिरण स्रोत और मापनयंत्र दोनों ही नापी जाने वाली परत के एक ही ओर होते हैं। परत द्वारा कुछ विकिरण वापिस उसी दिशा में प्रकीर्णित होते हैं जिस दिशा से आए थे। इस प्रक्रिया को प्रतीप-प्रकीर्णन (बैक-स्कैटरिंग) कहते हैं। प्रतीप-प्रकीर्णन मापन से परत की मोटाई मापी जा सकती है। इसमें प्रबंध ऐसा किया जाता है कि स्रोत से निकलने वाले विकिरण सीधे मापन यंत्र में न पहुंचें। मोटाई जितनी अधिक होगी, प्रकीर्णन उतना ही अधिक होगा। यह पहले बतायी गई अवशोषण प्रक्रिया के विपरीत होती है। अवशोषण मापक यंत्रों में मोटाई जितनी अधिक होगी, विकिरण दर उतनी ही कम प्राप्त होगी।

इस पुस्तिका में बताए गए परमाणु ऊर्जा के उपयोग आपको इसके असंख्य उपयोगों में से कुछ की झलक मात्र देते हैं। आशा है कि यह झलक परमाणु ऊर्जा के कुछ चमत्कार आपको बताने में सफल होंगे और आपकी रुचि परमाणु ऊर्जा के विषय में उत्पन्न कर सकेंगे। यदि आप किसी ऐसे उद्योग या संस्थान में जाएं जहां इनमें से किसी का

उपयोग हो रहा है तो उसे समझने में भी सहायक होंगे। वैज्ञानिक जानकारी को सरल बनाने की कोशिश में हो सकता है कि जितनी आप चाहते हो उतनी जानकारी इस पुस्तिका से न मिल सके। प्रयत्न यही किया गया है कि सरल बनाने की कोशिश में वैज्ञानिक तथ्यों का सार ठीक बना रहे।

13

परमाणु विकिरणों से सुरक्षा

मनुष्य जबसे इस धरती पर आया तभी से उसे विकिरणों का सामना करना पड़ा है। हम जहां रहते हैं उसके अनुसार इन विकिरणों की हमें मिलने वाली मात्रा कम या अधिक होती है। इनके तीन प्रमुख प्राकृतिक स्रोत हैं, ब्रह्माण्ड किरणें या कास्मिक किरणें, धरती में उपस्थित रेडियोसक्रिय पदार्थ जैसे यूरेनियम, थोरियम और पोटेसियम और हमारे शरीर के अन्दर उपस्थित ऐसे ही पदार्थ तथा कार्बन-14 आदि। कास्मिक किरणें दो प्रमुख प्रकार की होती हैं, एक तो वह जो सूर्य से आती हैं और दूसरी वह जो अंतरिक्ष से। अंतरिक्ष से प्राप्त होने वाले विकिरण की वार्षिक मात्रा में इतनी अधिक फेरबदल नहीं होती परन्तु सूर्य से प्राप्त होने वाली कास्मिक किरणों की मात्रा में सूर्य के अन्दर होने वाली क्रियाओं में होने वाले परिवर्तनों के अनुसार इनसे मिलने वाली वार्षिक विकिरण मात्रा में परिवर्तन होते रहते हैं। प्रायः हर 11वें वर्ष में सौर क्रियाओं की मात्रा अधिकतम स्थिति पर पहुंचती हैं और इसके बीच के समय में न्यूनतम स्थिति में। दोनों प्रकार की कास्मिक किरणों की मात्रा ऊंचाई पर स्थित जगहों पर अधिक और खानों के अन्दर कम होती है। ध्रुवों पर इसकी मात्रा अधिक और भूमध्य रेखा पर न्यूनतम

होती है। अतः हम कहां रहते हैं उसके अनुसार इन विकिरणों की मात्रा निर्भर करती है। वायुयान के यात्रियों को इसकी अधिक मात्रा मिलती है और अंतरिक्ष में जाने वाले व्यक्तियों को बहुत अधिक।

जहां हम रहते हैं वहां की धरती में रेडियोसक्रिय पदार्थों की मात्रा दूसरे प्राकृतिक स्रोत से मिलने वाली वार्षिक विकिरण मात्रा का निर्धारण करती है। जैसे केरल के उन तटों पर रहने वाले व्यक्तियों को, जहां थोरियम के भण्डार मोनाज़ाइट रेत के रूप में पाये जाते हैं। भारत के अन्य स्थानों पर रहने वाले व्यक्तियों की अपेक्षा, लगभग 10 गुनी अधिक तक विकिरण मात्रा मिलती है। तीसरे स्रोत अर्थात् शरीर के अन्दर उपस्थित रेडियोसक्रिय पदार्थों से मिलने वाली विकिरण मात्रा में इतना अधिक अंतर नहीं पाया जाता यद्यपि इसमें भी कुछ अन्तर वहां की मिट्टी में रेडियोसक्रिय पदार्थों की मात्रा, खाने पीने की आदतों के अनुसार होती है। कुल मिलाकर इन तीनों प्राकृतिक स्रोतों से मिलने वाली विकिरण की वार्षिक मात्रा स्थान और व्यवसाय के अनुसार भिन्न होती है और न्यूनतम और अधिकतम मात्राओं में 10 से 100 गुने तक का अन्तर हो सकता है। परन्तु हमेशा से मौजूद इन स्रोतों से मिलने वाले विकिरणों के कोई कुप्रभाव हमें अभी तक देखने को नहीं मिले हैं। कुछ वैज्ञानिकों का तो यह भी विश्वास है कि शायद यह विकिरण मानव के स्वस्थ विकास में यदि अनिवार्य नहीं तो सहायक अवश्य रहे हैं।

मनुष्य द्वारा परमाणु ऊर्जा के विभिन्न उपयोगों के कारण आम व्यक्ति को मिलने वाली विकिरण की अतिरिक्त मात्रा प्राकृतिक स्रोतों से मिलने वाली विकिरण मात्रा का बहुत थोड़ा सा अंश है। यह स्थिति उन देशों में भी है जहां भारत की अपेक्षा बहुत अधिक मात्रा में परमाणु ऊर्जा के प्रयोग किए जा रहे हैं। इसमें वह व्यक्ति शामिल नहीं हैं जिन्हें जानबूझ कर विकिरण की अतिरिक्त मात्रा रोगों के निदान एवं उपचार

के लिए दी जाती है। व्यापक स्तर पर मानव निर्मित स्रोतों में अभी तक सब से महत्वपूर्ण है परमाणु और हाइड्रोजन बमों का वातावरण में परीक्षण, परन्तु सौभाग्य से ऐसे परीक्षणों पर अधिकांश देशों द्वारा 1961 में लगाए प्रतिबन्ध के बाद इससे प्राप्त होने वाली मात्रा अब नगण्य हो गई है। चित्र 28 में इंग्लैंड में रहने वाले आम व्यक्ति को विभिन्न प्राकृतिक और मानव निर्मित स्रोतों से मिलने वाली विकिरण की मात्राओं को प्रतिशत रूप में दिखाया गया है और सारणी 6 में विभिन्न
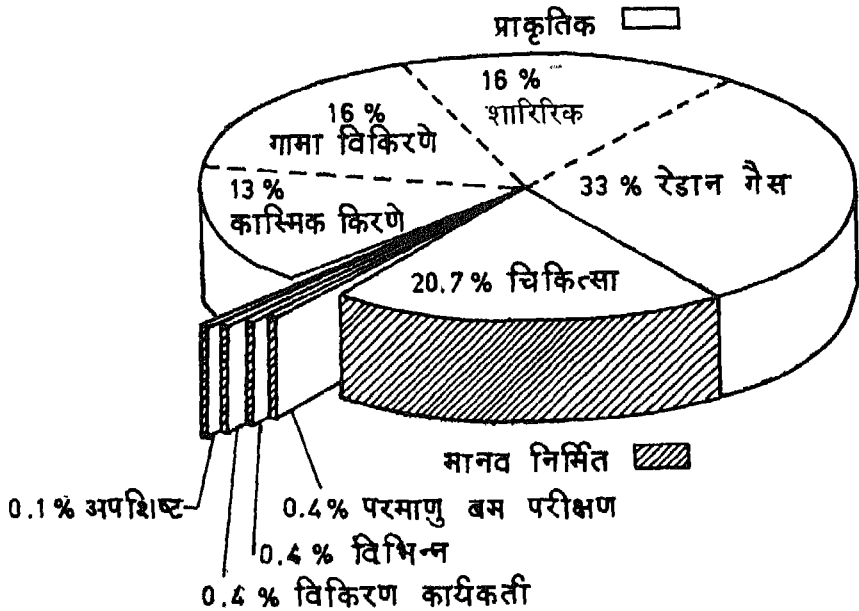
चित्र 28. इंग्लैंड की जनता को मिलने वाली विकिरण मात्रा में विभिन्न स्रोतों का योगदान

सारणी 6
इंग्लैंड में आम व्यक्ति को विभिन्न स्रोतों से मिलने वाली वार्षिक विकिरण मात्रा (इकाई-माइक्रोसीवर्ट)

स्रोत	वार्षिक मात्रा (माइक्रोसीवर्ट)
कास्मिक किरणें (ब्रह्माण्ड किरणें)	310
मानव शरीर के अन्दर के रेडियोसक्रिय पदार्थ	370
घरों के अन्दर एल्फा विकिरण	800
धरती में उपस्थित गामा विकिरण	380
चिकित्सा	500
परमाणु परीक्षणों की धूल	10
परमाणु ऊर्जा उद्योग	12
अन्य उपयोग	8

स्रोतों की मात्राओं को दिया गया है। भारत के लिए प्राकृतिक स्रोतों का योगदान और भी अधिक है क्योंकि चिकित्सा आदि में काम आने वाले मानव निर्मित स्रोतों का योगदान इस देश में कम है। यह इसलिए है क्योंकि भारत में परमाणु स्रोतों और एक्स किरणों का इतना व्यापक इस्तेमाल अभी नहीं होता है जितना इंग्लैंड जैसे विकसित देश में। प्राकृतिक स्रोतों से मिलने वाली मात्रा भी भारत के लिए कुछ कम है क्योंकि भूमध्य रेखा के निकट होने के कारण कास्मिक किरणों से मिलने वाली विकिरण मात्रा यहां कम है। यह आकड़े कुल देश के औसत आंकड़े हैं। जैसा कि पहले बताया गया है कि केरल तट के कुछ भागों में जहां मोनाज़ाइट रेत के भण्डार हैं, वहां रहने वाले व्यक्तियों को मिलने वाली प्राकृतिक विकिरण की मात्रा कई गुनी अधिक है और 99% के लगभग

विकिरण मात्रा इन्हें प्राकृतिक स्रोतों से मिलती है। परन्तु इनसे कहीं भी किसी हानिकारक कुप्रभाव को नहीं देखा गया है।

ऊपर बताए गए आंकड़ों से स्पष्ट है कि परमाणु ऊर्जा के मानव निर्मित स्रोतों से आम व्यक्ति को मिलने वाली विकिरण की अतिरिक्त मात्रा इतनी कम है कि किसी को कोई हानि की संभावना नहीं है। वास्तविकता तो यह है कि परमाणु बिजलीघर की चार दीवारी के बाहर रहने वाले किसी व्यक्ति को विकिरण की अतिरिक्त मात्रा प्राकृतिक स्रोतों से मिलने वाली मात्रा की 5 प्रतिशत से भी कम होती है और इससे अधिक मात्रा किसी को मिलने की संभावना नहीं है। अतः किसी को इस नए स्रोत के प्रति चिंता का कोई कारण नहीं है।

परमाणु ऊर्जा केंद्र में काम करने वालों को यद्यपि आम जनता की अपेक्षा 10 गुनी अधिक मात्रा देने की अनुमति है, परन्तु सामान्य स्थिति में यह भी प्राकृतिक स्रोतों से मिलने वाली मात्रा से अधिक नहीं होती। अतः उन्हें भी किसी स्वास्थ्य संबंधी समस्या का ख़तरा नहीं होता। यह सब इसीलिए संभव हो सका है क्योंकि जहां परमाणु विकिरण बहुत अधिक मात्रा में मिलने पर घातक हो सकते हैं वहीं इनके मापने के यंत्र इतने सक्षम होते हैं कि घातक मात्राओं की 1 लाखवें भाग से भी कम मात्रा को आसानी से मापा जा सकता है और इनके कुछ गुण ऐसे हैं कि मात्राओं को कम करना भी सिद्धांत रूप में अत्यन्त सरल है। अतः कर्मचारियों को मिलने वाली विकिरण मात्रा को सरलता से नियंत्रित किया जा सकता है। यह सिद्धांत तीन प्रमुख गुणों पर आधारित हैं।

1. **समय** : यदि विकिरण स्रोत शक्तिशाली है तो उससे मिलने वाले विकिरण की मात्रा को उसके निकट जाने के समय को कम करने से कम किया जा सकता है। उदाहरण के लिए यदि 10 मिनट स्रोत के समीप रहने पर 100 इकाई विकिरण मात्रा

व्यक्ति को मिल सकती है तो केवल 1 मिनट के लिए स्रोत के पास जाने की अनुमति देने पर यह मात्रा 10 इकाई मात्र रह जाएगी। समय और मात्रा में सीधा अनुपात होता है।

2. **दूरी** : यह और भी सशक्त तरीका है, दूरी बढ़ाने से विकिरण मात्रा दूरी के वर्ग के अनुपात में कम होती है। उदाहरण के लिए यदि विकिरण स्रोत से 1 मीटर दूरी पर 100 इकाई मात्रा मिलती है तो 2 मीटर दूरी पर मात्र 25 इकाई और 5 मीटर पर मात्र 4 इकाई विकिरण मात्रा मिलेगी। अतः ऐसे उपकरणों के प्रयोग से जिनसे स्रोत को दूर रखकर इस्तेमाल किया जा सके, उनसे मिलने वाली विकिरण की मात्रा को बहुत कम किया जा सकता है।
3. **शील्डिंग या कवच** : भारी तत्वों जैसे लोहा, सीसा आदि की बनी कवच रूपी दीवार के विकिरण स्रोत और व्यक्ति के बीच रख देने से विकिरण की व्यक्ति को मिलने वाली मात्रा को बहुत सक्षमता से कम किया जा सकता है। कुछ प्रकार के विकिरणों को तो शत-प्रतिशत रोका जा सकता है, जैसे एल्फा और बीटा विकिरण। इनके लिए तो कुछ मिलीमीटर की मोटाई ही पर्याप्त है, परन्तु गामा विकिरण एवं न्यूट्रानों के लिए विभिन्न प्रकार और मोटाई और पदार्थों की शील्डों का प्रयोग किया जाता है। गामा विकिरण के लिए लोहा और सीसा सर्वोत्तम पदार्थ हैं और न्यूट्रानों के लिए मोम या हाइड्रोजन तत्व वाले पदार्थों का उपयोग किया जाता है।

जहां भी विकिरण स्रोतों का प्रयोग होता है ऊपर बताए तीनों तरीकों का एक साथ प्रयोग आम तौर पर किया जाता है और स्वास्थ्य भौतिकी और विकिरण संरक्षण अधिकारी इस संबंध में निर्णय लेते हैं।

परमाणु ऊर्जा कार्यक्रमों में इन अधिकारियों की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती है और उनकी अनुमति के बिना किसी विकिरण स्रोत का प्रयोग नहीं किया जा सकता। ऐसे अधिकारी उन अस्पतालों, उद्योगों आदि में भी होते हैं जहां विकिरण स्रोतों का प्रयोग किया जाता है। वही अत्यन्त सूक्ष्मग्राही विकिरण नापने वाले यंत्रों का प्रयोग कर विकिरण मात्रा का मापन करते हैं। इसके अलावा भी विकिरण कार्यकर्ताओं के मल एवं मूत्र की जांच समय-समय पर की जाती है और उन्हें सदैव ऐसे बिल्लों और मात्रा मापकों (चित्र 29) को पहने रहना होता है जो उनको मिलने वाली विकिरण की सूक्ष्मतम मात्राओं को माप सकें।

चित्र 29. विकिरण मापक बिल्ला

विकिरण संरक्षण के सभी उपायों को सख्ती से अपनाने का प्रमुख कारण दुर्घटनाओं की संभावनाओं से बचना और यदि हो भी जाए तो उससे कर्मचारी प्रभावित न हों इसीलिए किया जाता है। विकिरण की अत्यधिक मात्रा केंसर जैसे भयानक रोग उत्पन्न कर सकती है और कर्मचारी के बच्चों में अनुवांशिक कुप्रभाव उत्पन्न कर सकते हैं। आयु घटा सकते हैं और ऐसे जख्म पैदा कर सकते हैं जो आसानी से ठीक न हों। परमाणु ऊर्जा संस्थानों के कर्मचारियों को विकिरण से कितने कम खतरे या हानि की संभावना है इसका सहज अनुमान सारणी 7 में दिए गए इंग्लैंड के आंकड़ों से आपको लग सकेगा। सौभाग्य से परमाणु ऊर्जा

सारणी 7

परमाणु ऊर्जा और अन्य गतिविधियों में तुलनात्मक जोखिम (इंग्लैंड के आंकड़ों पर आधारित)

गतिविधि	मृत्यु की संभावना/वर्ष
धूम्रपान 20 सिगरेट प्रतिदिन	200 में 1 की
गहरे सागर में मछली पकड़ना	400 में 1 की
40 वर्ष आयु के बाद प्राकृतिक कारणों से	500 में 1 की
सड़क दुर्घटनाएं	5000 में 1 की
घर में हो सकने वाली दुर्घटनाएं	10,000 में 1 की
सामान्य व्यवसायों में	20,000 में 1 की
परमाणु ऊर्जा उद्योग में काम करने से (विकिरण से कार्य)	20,000 में 1 की

(आप देखेंगे कि जब विकिरण स्रोतों से काम करने वालों के लिए जोखिम इतनी कम है तो सामान्य व्यक्ति को इनसे चिंता का कोई कारण नहीं होना चाहिए)

के प्रयोग के विश्व स्तर पर मिलने वाले आंकड़े बताते हैं कि यह सबसे सुरक्षित उद्योगों में से है। यह सुरक्षा उपायों के सख्ती से लागू करने के कारण संभव हो सका है। आम व्यक्ति को विकिरण के प्रति जो सावधानियां बरतनी चाहिए वह निम्नलिखित हैं।

आम लोगों के लिए विकिरण सुरक्षा उपाय

1. यदि किसी बक्से पर चित्र 30 में दिखाया गया चिन्ह बना हो तो उसे न खोलें। उसमें विकिरण स्रोत है। उससे जितना संभव हो दूर रहें।
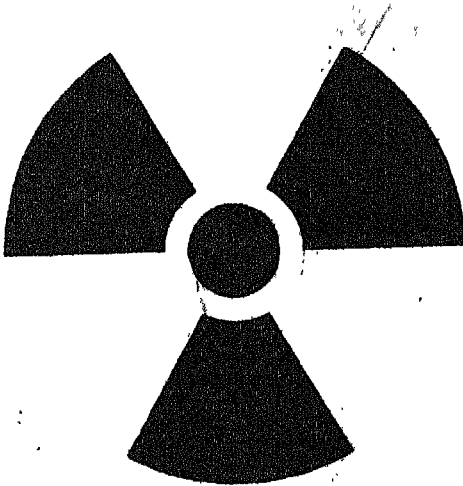
चित्र 30. विकिरण स्रोत दर्शाने वाला चिन्ह

2. यदि अपना या किसी मित्र का एक्स-रे चित्र निकलवाने जाए तो एक्स-रे मशीन कक्ष के बाहर रहें, केवल चित्र निकलवाते समय बताए गए स्थान पर निर्देशानुसार खड़े हों या लेटें। कई आम अस्पतालों में ऐसी मशीनें अलग बन्द कमरों में नहीं होतीं, वहां भी बाहर लाइन लगाएं।
3. यदि किसी भी नाभिकीय चिकित्सा केन्द्र जैसे टाटा केंसर अस्पताल बम्बई, अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली आदि में जाएं तो जहां भी ऊपर बताया विकिरण चिन्ह या विकिरण शब्द लिखा हो, वहां से दूर रहें। प्रायः ऐसे स्थानों पर दर्शकों के बैठने के लिए विशेष स्थान बनाए गए हैं। यदि किसी संबंधी की केंसर आदि के लिए विकिरण चिकित्सा चल रही हो तो मरीज़ के साथ रहने का आग्रह न करें। डाक्टर की सलाह पूरी तरह मानें।
4. प्रत्येक एक्स-रे चित्र के निकालने में आपको विकिरण की कुछ मात्रा मिलती है, अतः जब भी डाक्टर आपको एक्स रे निकलवाने की सलाह दे तो उसे पिछले लिए गए एक्स-रे चित्रों की जानकारी दें, यदि हो सके तो ऐसे चित्र अपने पास रखें व उन्हें बताएं ताकि डाक्टर निर्णय ले सकें कि क्या एक और चित्र निकलवाना अनिवार्य है।
5. गर्भवती महिलाओं को यदि एक्स-रे चित्र निकलवाने की सलाह दी जाए तो वह डाक्टर को गर्भवती होने की सूचना दें। ऐसी स्थिति में एक्स-रे करवाना हानिकारक हो सकता है। विशेष रूप से गर्भ के आरंभ के कुछ महीनों में।
6. यदि किसी परमाणु ऊर्जा केन्द्र को देखने जाएं तो वहां दिए गए निर्देशों का पूरी तरह पालन करें। विकिरण दिखाई नहीं देते, वहां के कर्मचारियों को स्रोतों के स्थानों का सही ज्ञान होता है। रिएक्टर

आदि देखने के लिए इसीलिए वहां के कर्मचारी साथ जाते हैं, उन्हीं के साथ रहें। यदि वह कोई बिल्ला पहनने को कहें तो उसे धार करें इससे उन्हें आपको मिलने वाली विकिरण की सूक्ष्मतम मात्रा का भी पता लग सकेगा। यह आम सुरक्षा उपाय है, इससे आपको कोई खतरा नहीं होगा।

7. यदि किसी अज्ञात स्थान पर आपको कोई ऐसा बक्सा दिखे जिस पर विकिरण चित्र बना हो तो उसकी सूचना निकटवर्ती थाने को दें। हो सकता है यह चुराया गया हो। आज विकिरण स्रोतों का उपयोग अनेकों आम उद्योगों में भी होता है।
8. यदि कभी दुर्भाग्य से आपके क्षेत्र में रेडियोएक्टिविटी संबंधी आपातकाल स्थिति की घोषणा सरकार द्वारा की जाए तो जो सावधानियाँ आम व्यक्ति को बरतनी चाहिए। वह हैं (अ) घर के अंदर रहना। यदि घर में तहखाना हो तो उसमें चले जाना। (ब) बाजार के दूध के स्थान पर डिब्बे के दूध का इस्तेमाल, विशेषरूप से बच्चों के लिए। (स) पीने के लिए घर में भरे रखे पानी का प्रयोग, नल, कुएं या तालाब के पानी के स्थान पर और घर के अंदर मौजूद खाने के सामान का प्रयोग। हरी पत्तियों वाली ताजी भाजियाँ उपयोग में नहीं लानी चाहिए। शेष निर्देश संचार माध्यमों से निरंतर दिए जाएंगे। इस दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति की संभावना परमाणु युद्ध में आ सकती है चाहे वह किन्हीं देशों के बीच हो।

□□□

परिशिष्ट 1

विकिरण मापन इतना सूक्ष्मग्राही क्यों?

इस पुस्तिका में बताए गए परमाणु ऊर्जा के विभिन्न उपयोगों की चर्चा में आपने पाया होगा कि हम सदैव यही प्रयत्न करते हैं कि मापन के लिए हम विकिरण मापन की भौतिक तकनीकों का ही उपयोग कर सकें। ऐसा क्यों? इसका कारण यह है कि अधिकांश स्थितियों में हम विकिरण की जितनी सूक्ष्म मात्रा का मापन कर सकते हैं। उतनी सूक्ष्म मात्राओं का मापन किसी अन्य सामान्य तकनीक जैसे तौलना, तापमान की वृद्धि मापना, रसायनिक गुणों का मापना आदि से संभव नहीं होता। विकिरण मापन से प्राप्त विकिरण दर का सीधा संबंध उस रेडियो-आइसोटोप के परमाणुओं की कुल संख्या से होता है अतः इस मापन से हम परमाणुओं की कुल संख्या का भी पता लगा सकते हैं। इस संख्या का सीधा संबंध उस रेडियोआइसोटोप की मात्रा से होता है अतः हम बहुत सूक्ष्म मात्राओं का मापन कर सकते हैं। पदार्थ की सूक्ष्मतम मात्राओं में भी उसके परमाणुओं की संख्या इतनी अधिक होती है कि यदि इनकी संख्या का मापन कुछ कम सक्षमता से भी हो सके तो भी यह दूसरे तरीकों की अपेक्षा बहुत कम मात्रा का मापन संभव करते हैं। आपने प्रयोगशाला में विभिन्न पदार्थों को तोलने का अभ्यास तो किया ही होगा

और पाया होगा कि 1 ग्राम भार के एक हजारवें भाग के तोलने में भी कितनी कठिनाई होती है। इसके विपरीत यदि हम कई हजार या कई लाख परमाणुओं का भी एक साथ मापन कर सकें तो भार की दृष्टि से बहुत कम होगा। इतनी कम मात्रा का मापन या तोलना किसी रसायनिक या अन्य विधि से संभव नहीं है। दूसरा कारण यह है कि अच्छी दक्षता वाले विकिरण मापक यंत्रों का विकास संभव ही नहीं है बल्कि बहुत समय पहले हो चुका है। इसे समझने के लिए हम उदाहरणों का सहारा लेंगे। इसके लिए हम यह मानकर चलेंगे कि विकिरण मापन यंत्रों की दक्षता 20 से 30 प्रतिशत आसानी से प्राप्त की जा सकती है अर्थात यदि कोई पदार्थ 100 विकिरण प्रति सेकंड उत्सर्जित करता या निकलता है तो हमारा उपकरण उनमें से 20 से 30 को अंकित करेगा। और भी सरल बनाने के लिए हम इस दक्षता को मात्र 10 प्रतिशत माने तो प्रत्येक 100 विकिरणों में से वह 10 को अंकित करेगा। अब देखें कि रेडियो-आइसोटोप की कितनी सूक्ष्म मात्रा हमें मापन योग्य विकिरण प्रदान कर सकती है। इसके लिए हमें दो और सिद्धांतों का सहारा लेना होगा। पहला है एवोगेड्रो का सिद्धांत जो बताता है कि किसी भी तत्व के एक ग्राम भार में 6.02×10^{23} परमाणु होते हैं। ग्राम भार उस तत्व के भार क्रमांक जितने ग्राम, भार को लेने से प्राप्त होता है। उदाहरण रूप में हाइड्रोजन (भार क्रमांक 1) के 1 ग्राम, कार्बन (भार क्रमांक 12) के 12 ग्राम या यूरेनियम (भार क्रमांक 238) के 238 ग्राम भार में से प्रत्येक में उस तत्व के परमाणुओं की संख्या 6.02×10^{23} होगी। यह बहुत बड़ी संख्या है जिसमें अंक 6 के आगे 23 शून्य लगाने होते हैं। दूसरा सिद्धांत रेडियोएक्टिव क्षय या विकिरणों की दर बताता है। इसके अनुसार

$$\text{विकिरण दर} \div - \frac{0.693}{\text{अर्धायु}} \times \text{परमाणुओं की संख्या}$$

इस समीकरण में (−) चिन्ह दर्शाता है कि विकिरण निकलने से उस रेडियोआइसोटोप के परमाणुओं की संख्या घटती जाती है। विकिरण दर की इकाई वही होती है जो अर्धायु की। अर्थात् यदि हम अर्धायु क़ो मिनटों में लिखें तो विकिरण दर प्रति मिनट होगी। इस समीकरण से यह भी पता लगता है कि किसी रेडियोआइसोटोप की जितनी अर्धायु कम होगी, उतनी ही अधिक विकिरण दर से वह विकिरण देगा। हम देखेंगे कि उतनी ही कम मात्रा का मापन संभव हो सकेगा। इसे हम दो उदाहरणों की सहायता से देखेंगे। एक कम अर्धायु वाले रेडियोआइसोटोप का और एक बहुत लम्बी अर्धायु वाले रेडियो-आइसोटोप का। कम अर्धायु का उदाहरण सोडियम-24 और लम्बी अर्धायु का उदाहरण प्राकृतिक यूरेनियम (जो मुख्य रूप से यूरेनियम-238 होता है) लेंगे।

सोडियम-24

उदाहरण 1 : एवोगेड्रो के सिद्धांत के अनुसार

24 ग्राम सोडियम-24 में 6.02×10^{23} परमाणु होंगे

अतः 1 ग्राम सोडियम-24 में $\dfrac{6.02 \times 10^{23}}{24}$

$= 2.5 \times 10^{22}$ परमाणु होंगे

इस रेडियोआइसोटोप की अर्धायु लगभग 15 घंटा है अतः 1 ग्राम सोडियम-24 की विकिरण दर होगी

$$\frac{0.693}{15} \times 2.5 \times 10^{22}$$

$= 1.16 \times 10^{21}$ विकिरण प्रति घंटा

10 प्रतिशत दक्षता वाला यंत्र 1.16×10^{20} विकिरण 1 घंटे में अंकित करेगा। इस रेडियोआइसोटोप का (जो बीटा ग़ामा विकिरण देता है) हम 600 अंकित विकिरण प्रति घंटा दर का मापन बहुत आसानी से कर सकते हैं। अतः हम 1 ग्राम के लगभग 20,000,000,000,000,000वें भाग का मापन कर सकते हैं जो किसी अन्य तकनीक से संभव नहीं है।

यूरेनियम-238

उदाहरण 2 : 238 ग्राम यूरेनियम-238 में 6.02×10^{23} परमाणु होंगे अतः 1 ग्राम यूरेनियम-238 में 2.5×10^{21} परमाणु होंगे।

$$\left(\frac{6.02 \times 10^{23}}{238}\right) = 2.5 \times 10^{21}$$ परमाणु होंगे

इसकी अर्धायु 4.47×10^{9} वर्ष $= 4.47 \times 365 \times 24 \times 10^{9}$ घंटा है। अतः 1 ग्राम यूरेनियम-238 की विकिरण दर होगी

$$\frac{0.693}{4.47 \times 365 \times 24 \times 10^{9}} \times 2.5 \times 10^{21}$$

विकिरण प्रति घंटा

$= 4.4 \times 10^{7}$ विकिरण प्रति घंटा

10 प्रतिशत दक्षता वाला यंत्र 4.4×10^{6} विकिरण प्रति

इस रेडियोआइसोटोप से एल्फा विकिरण निकलते हैं जिनकी 10 अंकित विकिरण प्रति घंटा दर का मापन शुद्धता से हो सकता है। अतः हम 1 ग्राम के लगभग 4 लाखवें भाग का मापन आसानी से कर सकते हैं। यद्यपि यह मात्रा उदाहरण 1 की अपेक्षा बहुत अधिक है परन्तु इतनी कम मात्रा का भी मापन किसी अन्य विधि से संभव नहीं है। ऐसी दीर्घ अर्धायु वाले अनेकों रेडियोआइसोटोपों के विकिरण मापन की अन्य तकनीकों के प्रयोग से और भी अत्यन्त सूक्ष्म मात्राओं को मापना संभव है। उदाहरण के लिए हम प्राकृतिक यूरेनियम को ही लें तो यदि हम इसे परमाणु रिएक्टर में न्यूट्रान द्वारा सक्रियण करें अर्थात् इसे हम न्यूट्रान स्रोत के बीच रखें तो इसके कुछ परमाणु यूरेनियम-239 में बदल जाएंगे जिनका क्षय होने पर हमें नेप्चूनियम-239 रेडियोआइसोटोप मिलेगा। इसकी अर्धायु लगभग 2 दिन है अतः इसकी अत्यन्त सूक्ष्म मात्रा का मापन संभव है। इस मापन से हम यूरेनियम की बहुत सूक्ष्म मात्रा का पता लगा सकते हैं। इसी प्रकार की अनेकों दूसरी तकनीकें भी उपलब्ध हैं जिनमें विभिन्न नाभिकीय गुणों के उपयोग से हम बहुत सूक्ष्म मात्राओं का मापन कर सकते हैं।

रेडियोआइसोटोपों के बिना किसी अन्य तकनीक का सहारा लिए सीधे मापन द्वारा भी हम अधिकांश रेडियोआइसोटोपों का मापन ऊपर दिए गए उदाहरणों की सूक्ष्मतम मात्राओं के बीच के मात्रा क्षेत्र में कर सकते हैं क्योंकि उनकी अर्धायु इन दो उदाहरणों के बीच के क्षेत्र में होती हैं। यदि अर्धायु बहुत कम हो (1 सेकंड का भी सूक्ष्म भाग) तो बहुत कम मात्राओं का मापन कठिन होता है क्योंकि जब तक हम उन्हें माप सकें तब तक उसके अधिकांश परमाणु क्षय प्रक्रिया द्वारा क्षय हो चुके होंगे। ऐसे रेडियोआइसोटोपों में से अधिकांश के विकिरण तकनीक द्वारा मापन के लिए, विकिरण मापन सिद्धांत पर ही आधारित अन्य तकनीकें हमें उपलब्ध हैं।

परिशिष्ट 2

रेडियोआइसोटोप के उपयोग संबंधी अतिरिक्त जानकारी

रेडियोआइसोटोपों के विभिन्न उपयोग उनके आयनीकरण, पदार्थभेदी, प्रकीर्णन और कोशिकाओं को नष्ट करने के गुणों पर आधारित होते हैं। रेडियोआइसोटोप को कितने समय तक बिना बदले इस्तेमाल किया जा सकता है, यह उसकी अर्धायु पर निर्भर करता है जितनी ही अर्धायु अधिक होगी उतने ही लम्बे समय तक उसका प्रयोग किया जा सकता है। प्रायः दो से तीन अर्धायु तक उसका प्रयोग किया जाना संभव होता है क्योंकि उसके बाद उसकी विकिरण-तीव्रता इतनी कम हो जाती है कि उसका प्रयोग सक्षम नहीं रहता। एक अर्धायु के बाद उसकी तीव्रता आधी और दो अर्धायु के बाद एक चौथाई रह जाती है अतः उतना ही विकिरण प्राप्त करने के लिए विकिरण देने का समय उसी अनुपात में दो या चार गुना करना पड़ता है। इससे अधिक विकिरण समय बढ़ाने पर स्रोत का उपयोग उतने ही कम कार्यों के लिए संभव हो पाता है। गुणों के आधार पर, एल्फा स्रोतों का उपयोग उन कार्यों में किया जाता है जहां आयन उत्पन्न और उनके मापन आदि का इस्तेमाल किया जाता है। इनके लिए पोलोनियम-210 सबसे अधिक काम में लाया जाता है। इस स्रोत के प्रमुख उपयोग हैं स्वचालित आग-अलार्मों (Fire Alarms) और स्थिर-आवेश निवारण (Static

Charge elimination) करने वाले उपकरण। एल्फा स्रोतों का एक और महत्वपूर्ण उपयोग रेडियोआइसोटोप बिजली उत्पादकों में है। इसके लिए पोलोनियम-210 और प्लूटोनियम-238 का व्यापक उपयोग होता है। बीटा विकिरण देने वाले रेडियोआइसोटोप, एल्फा की अपेक्षा अधिक पदार्थभेदी और कम आयनीकरण उत्पन्न करते हैं। अतः जहां स्थानीय रूप से विकिरण देना हो या अन्य भागों की विकिरण से सुरक्षा आवश्यक हो वहां उपयोग में लाए जाते हैं। प्रकीर्णन मापक यंत्रों में भी इनका प्रयोग किया जाता है। रेडियोआइसोटोप बिजली उत्पादकों में भी इनका काफी उपयोग होता है। चिकित्सा, रोग निदान, कृषि, भूगर्भीय जल स्रोतों का पता लगाने में प्रयोग आने वाले अंकित यौगिक एवं रेडियोआइसोटोप के प्राथमिक रूप में सर्वाधिक उपयोग में आने वाले बीटा रेडियोआइसोटोप हैं, ट्रीटियम, कार्बन-14, फास्फोरस-32, सल्फर-35 और स्ट्रान्शियम-90।

गामा विकिरण देने वाले रेडियोआइसोटोप सबसे अधिक उपयोग में आते हैं इनके सबसे अधिक पदार्थभेदी होने और कोशिकाओं को मारने एवं उनमें जीन म्यूटेशन उत्पन्न करने के गुणों का प्रयोग किया जाता है। इनके प्रकीर्णन गुण का उपयोग मोटाई मापकों में होता है। चिकित्सा, रोगनिदान, रेडियोग्राफी, जीवाणुनाशन, खाद्य सामग्री संरक्षण आदि इनके प्रमुख उपयोग हैं। कोबाल्ट-60, सीजियम-137, इरीडियम-192 और रेडियम-226 सर्वाधिक उपयोग में आने वाले गामा रेडियोआइसोटोप हैं।

ऊपर बताए गए सभी रेडियोआइसोटोपों के प्रमुख गुण निम्न सारणी में दिए गए हैं।

क्रमांक	रेडियोआइसोटोप	अर्धायु	विकिरण
1	ट्रीटियम	12.3 वर्ष	बीटा
2	कार्बन-14	5730 वर्ष	बीटा
3	फास्फोरस-32	14.3 दिन	बीटा
4	सल्फर-35	87.2 दिन	बीटा
5	कोबाल्ट-60	5.3 वर्ष	बीटा, गामा
6	स्ट्रान्शियम-90	29 वर्ष	बीटा
7	सीज़ियम-137	30 वर्ष	बीटा, गामा
8	इरीडियम-192	74.2 दिन	बीटा, गामा
9	पोलोनियम-210	138.4 दिन	एल्फा
10	रेडियम-226	1600 वर्ष	एल्फा, बीटा, गामा
11	प्लूटोनियम-238	87.7 वर्ष	एल्फा

तकनीकी शब्दावली

Alpha Particle :
एल्फा कणिक : तत्व हीलियम के नाभिक जिसमें दो प्रोटान और दो न्यूट्रान होते हैं। इनका आवेश दो (+) होता है और भार 4 इकाई के बराबर होता है।

Alpha Ray :
एल्फा किरण : एल्फा कणिकीय पदार्थों की धारा जो पथ में तीव्र आयनीकरण करती है और कम पदार्थभेदी होती हैं।

Atom :
परमाणु : किसी तत्व की सूक्ष्मतम इकाई जो रसायनिक प्रक्रिया में भाग ले सकती है।

Atomic Number :
परमाणु क्रमांक : परमाणु के नाभिक में प्रोटान की कुल संख्या। यह नाभिक का कुल (+) आवेश बताता है। उदासीन परमाणु में इलेक्ट्रान की संख्या भी इतनी ही होती है।

Back-Scattering :
प्रतीप प्रकीर्णन : विकिरण दिशा से 90° से अधिक कोणों पर विकिरण का प्रकीर्णन।

Beta Particle :
बीटा कणिक : नाभिक द्वारा उत्सर्जित – या + आवेश वाले कणिक जो भार में इलेक्ट्रान जितने होते हैं।

Beta Ray :
बीटा किरण : उच्च वेग वाली बीटा कणिकीय पदार्थों की धारा जो नाभिक से निकलती है और इलेक्ट्रान या पाज़ीट्रान (+ आवेश वाले इलेक्ट्रान) की होती है। यह एल्फा किरण की अपेक्षा कम आयनीकरण उत्पन्न करती है और अधिक पदार्थभेदी गुण रखती है।

Cell :
कोशिका : किसी जैविक पौधे या जीवजन्तु की सूक्ष्मतम इकाई जिसमें उस जीव के सभी गुणों और संरचना के लक्षण होते हैं।

Charge :
आवेश : यह दो प्रकार के होते हैं (+) और (−) और विपरीत आवेश वाले कणिकीय पदार्थ या आयन एक दूसरे को आकर्षित करते हैं।

Coolant :
शीतलक : आम तौर पर द्रव अवस्था वाला पदार्थ जिसका प्रयोग रिएक्टर के किसी भाग को ठंडा करने में और वहां के ताप को अन्यत्र ले जाने में किया जाता है जैसे भारी जल, सादा जल, द्रव सोडियम।

Cosmic Rays :
कास्मिक किरणें : बहुत अधिक ऊर्जा वाले कणिकीय पदार्थ एवं विद्युत-चुंबकीय विकिरण जो पृथ्वी के वायु मण्डल के बाहर से प्राकृतिक रूप में निरंतर आती रहती हैं।

Critical :
क्रांतिक : रिएक्टर की वह अवस्था जब श्रृंखलाबद्ध प्रक्रिया स्थापित हो कर उसी स्तर पर चलती रहे। रिएक्टर के निश्चित शक्ति पर कार्यारंभ करने को उसका क्रांतिक होना कहते हैं।

Decay :
क्षय : वह प्रक्रिया जिसके द्वारा रेडियोआइसोटोप विकिरण या कणिकीय पदार्थ निकाल कर अपना आरंभिक अस्तित्व खो देते हैं।

Deuterium :
ड्यूटेरियम : हाइड्रोजन की वह भारी आइसोटोप जिसके नाभिक में एक प्रोटान और एक न्यूट्रान होता है इसे D या H-2 से चिन्हित करते हैं।

Electron :
इलेक्ट्रान : (–) आवेश वाले वह कणिकीय पदार्थ जो नाभिक के चारों ओर निरंतर घूमते रहते हैं।

Element :
तत्व : वह शुद्ध पदार्थ जिसके सभी परमाणु एक ही परमाणु क्रमांक वाले होते हैं। इन्हें किसी सामान्य रसायनिक प्रक्रिया द्वारा और विभाजित नहीं किया जा सकता। जैसे हाइड्रोजन, कार्बन. यूरेनियम।

Enriched Uranium :
परिष्कृत यूरेनियम : ऐसा यूरेनियम जिसमें यूरेनियम-235

आइसोटोप की मात्रा, प्राकृतिक (0.7 प्रतिशत) से अधिक हो।

Fission :
विखंडन : वह भौतिक प्रक्रिया जिसके द्वारा भारी अस्थाई परमाणुओं के नाभिक दो या अधिक भागों में टूट जाते हैं और इसी के साथ बड़ी मात्रा में ऊर्जा भी उंत्पन्न होती है।

Fusion :
संलयन : वह भौतिक प्रक्रिया जिसके द्वारा दो या अधिक हल्के नाभिक मिलकर भारी नाभिक बनाते हैं इस प्रक्रिया में भी बड़ी मात्रा में ऊर्जा उत्पन्न होती है।

Gamma ray :
गामा किरणें : वे विद्युत-चुंबकीय विकिरण जो नाभिक से निकलते हैं। इन पर कोई आवेश नहीं होता और एल्फा एवं बीटा किरणों की अपेक्षा अधिक पदार्थभेदी होते हैं।

Gene :
जीन : कोशिकाओं की वह मूल इकाई जिसमें उस जीव की सभी अनुवांशिक जानकारी और लक्षण होते हैं।

Half-life :
अर्धायु : वह समय जिसमें किसी रेडियोआइसोटोप के आधे परमाणु क्षय हो जाते हैं। इसी समय में उसकी विकिरण दर आधी रह जाती है।

Ionization :
आयनीकरण : वह प्रक्रिया जिसके कारण उदासीन परमाणु या अणु (+) या (–) आवेश प्राप्त कर लेते हैं।

Isotope :
आइसोटोप : किसी तत्व के ऐसे परमाणु जिनके नाभिकों में प्रोटानों की संख्या तो समान हो परन्तु न्यूट्रानों की भिन्न अर्थात् जिनका परमाणु क्रमांक एक हो परन्तु भार क्रमांक भिन्न।

Kilowatt :
किलोवाट : बिजली की वह मात्रा जिसके 1 घंटा उपयोग से 1 इकाई बिजली खर्च होती है। बिजली की आर्थिक दर इसी इकाई को दी जाती है।

Labelled Compound :
अंकित यौगिक :
ऐसे यौगिक जिनके किसी या कुछ परमाणुओं को उनके रेडियोआइसोटोप से बदल दिया गया हो। रेडियोआइसोटोप के स्थान पर किसी भिन्न स्थाई आइसोटोप द्वारा भी अंकित किया जा सकता है। इन यौगिकों का विभिन्न भौतिक, रसायनिक और जैविक प्रक्रियाओं के अध्ययन में प्रयोग किया जाता है।

Mass Number :
भार क्रमांक : किसी परमाणु के नाभिक में प्रोट्रान एवं न्यूट्रानों की कुल संख्या। इसे चिन्ह 'A' से दर्शातें हैं।

Megawatt :
मेगावाट : बिजली उत्पादन दर की इकाई। इसे चिन्ह MW से दर्शाते हैं। यह 1000 किलोवाट के बराबर होती है।

Moderator :
मंदक : न्यूट्रानों की रिएक्टर आदि में गति कम करने के लिए प्रयोग में लाए जाने वाले पदार्थ जैसे भारी पानी, ग्रेफाइट, सादा पानी।

Mutation :
म्यूटेशन : वह प्रक्रिया जिससे सामान्य अनुवांशिक लक्षणों में परिवर्तन होते हैं। इससे पौधों या जीव में भिन्न लक्षण भी उत्पन्न हो सकते हैं।

Neutron :
न्यूट्रान : परमाणु के नाभिक में पाया जाने वाला प्रारंभिक कणिकीय पदार्थ जो भार में लगभग प्रोटान जितना ही होता है। इस पर कोई आवेश नहीं होता।

Nucleus :
नाभिक : किसी परमाणु का वह केंद्रीय भाग जिस पर परमाणु का पूर्ण (+) आवेश होता है और जिसमें परमाणु का लगभग संपूर्ण भार होता है।

Proton :
प्रोटान : परमाणु के नाभिक में पायां जाने वाला प्रारंभिक कणिकीय पदार्थ जिस पर एक (+) आवेश होता है। इसका भार लगभग न्यूट्रान जितना ही होता है।

Radiation :
विकिरण : परमाणु के नाभिक से निकलने वाले कणिकीय पदार्थ या विद्युत-चुंबकीय किरणें। नाभिक के चारों ओर घूमते इलेक्ट्रान भी उत्तेजित अवस्था (बाहरी कक्षा) से सामान्य अवस्था (भीतरी कक्षा) में आने पर विद्युत-चुंबकीय किरणें निकालते हैं। वह विकिरण जो अपने पथ में (+) और (–) आवेश वाले आयन उत्पन्न कर सकें आयनीकारक विकिरण कहलाते हैं।

Radioactivity :
रेडियोसक्रियता : पदार्थों की वह प्रक्रिया जिसमें उसके परमाणुओं के नाभिक स्वतः कणिकीय पदार्थ या विकिरण निकालते रहते हैं।

Radioisotope :
रेडियोआइसोटोप : ऐसे आइसोटोप जिनमें रेडियोसक्रियता गुण पाया जाता है।

·Reactor :
रिएक्टर : परमाणु ऊर्जा के संदर्भ में यह संसाधन जिनमें श्रृंखलाबद्ध विखंडन प्रक्रिया स्थापित की जा सके। इसके लिए यदि मंदित न्यूट्रान का प्रयोग किया जाए तो इन्हें तापीय रिएक्टर कहते हैं और यदि तीव्र न्यूट्रान प्रयोग किए जाएं तो तीव्र रिएक्टर। प्रजनन रिएक्टर तीव्र रिएक्टरों का वह प्रकार है जो जितना ईंधन जलाएं उससे अधिक उत्पन्न कर सकें।

Reflector :
परावर्तक : वह पदार्थ जिनका प्रयोग रिएक्टर के बाहरी भागों में न्यूट्रानों को परावर्तित करने में वैसे ही होता है जैसे दर्पण का प्रयोग प्रकाश को परावर्तित करने में होता है।

Shield :
कवच, ढाल : वह पदार्थ जिनका उपयोग विकिरणों को अवशोषित करने में किया जाता है जैसे लोहा, सीसा, पारा आदि।

Tritium :
ट्रीटियम : हाइड्रोजन का वह भारी आइसोटोप जिसके नाभिक में दो न्यूट्रान होते हैं। यह रेडियोसक्रिय होता है।

X-Ray :
एक्स-रे : वह विद्युत-चुंबकीय किरणें जो नाभिक से न निकल कर परमाणु के बाहरी भाग इलेक्ट्रानों के बाहरी कक्षा से भीतरी कक्षा में आने पर निकलती हैं। यह पदार्थभेदी होती हैं। इनका व्यापक उपयोग फेफड़ों आदि का चित्र लेने में होता है।